₹ 30

ज़ीक़ाद 1431

मरयम

इमाम अली रज़ा अ0

कामयाब औरत

अच्छी माँ की क्वालिटीज़

रूहानी बीमारियां

गर्ल्स एजुकेशन

वीमेन राइट्स
और आज़ादी के नारे

ख़ाली दुकान

घरेलू ज़िंदगी

इमामे ज़माना अ०

तुम में से हर एक को वह काम करना चाहिएं
जो तुम्हें हम से क़रीब कर सकें और उन कामों से बचना चाहिए
जो हमें पसन्द नहीं हैं और जिन से हम नाराज़ होते हैं।

(अल-एहतेजात, 2/324)

اَللّٰهُمَّ صَلِّ عَلٰى عَلِيِّ بْنِ مُوسَى الرِّضَا

इमाम अली रज़ा[अ०] फ़रमाते हैं:

''अपने वादों को तोड़कर कोई भी इन्सान मुश्किलों के भंवर से नहीं निकल सकता और न ही कोई मक्कारी से जुल्म करके सज़ा के शिकंजे से बच सकता है।''

''कंजूस को सुकून मयस्सर नहीं होता, हसद करने वाले को लुत्फ़ नहीं मिलता, मालदार वफ़ा नहीं करता और झूठे से मुरव्वत की उम्मीद नहीं की जा सकती।''

''छोटे-छोटे गुनाह बड़े गुनाहों का रास्ता खोल देते हैं। जो भी अपने छोटे और कम गुनाहों पर खुदा वन्दे आलम से न डरे, उसे बड़े-बड़े गुनाहों की भी परवा नहीं होगी।''

''जुल्म करने वाला, जुल्म करने वाले का मददगार और उस जुल्म पर चुप बैठे रहने वाले, सब के सब जुल्म में बराबर के शरीक हैं।''

یا علی بن موسی الرضا

علیہ السلام

Monthly Magazine

मरयम

October-November 2010

MARYAM

A Socio-Cultural & Religious Monthly Magazine

Chief Editor
S. Mohd. Hasan Naqvi

Editorial Board
Mohd. Fayyaz Baqir
Akhtar Abbas Jaun
Qamar Mehdi
Ali Zafar Zaidi

Managing Editor
Abbas Asghar Shabrez

Executive Editor
Fasahat Husain

Assist. Exec. Editor
Mohd. Aqeel Zaidi

Contributors
Haider Abbas Rizvi
Mehdi Gulrez
Azmi Rizvi
Fatima

Graphic Designer
Siraj Abidi
9839099435

Typist
Sufyan Ahmad

इस महीने आप पढ़ेंगी...

कामयाब औरत	26
घरेलू ज़िन्दगी में अफ़रा-तफ़री	18
काला बाज़ारी	7
फ़ातिमा ग़ाहम	12
ख़ाली दुकान	28
औरतों की शान	5
गर्ल्स एजुकेशन	24
मासूमा-ए-कुम	8
इमाम मुहम्मद तक़ी(अ)	42
माँ का ख़्वाब (नज़्म)	39
औरतें, इमाम ख़ुमैनी की नज़र में	10
फ़ैमिली में औरत की हैसियत	17
अच्छी माँ की क्वालिटीज़	38
ग़ुस्सा दिल की बीमारी पैदा कर सकता है	27
ग़लती किसकी है?	36
हुस्न और सेहत के लिए क़ुदरत का तोहफ़ा	19
वीमेन राइट्स और आज़ादी के नारे	32
इमाम अली रज़ा(अ)	22
औरत-मर्द में बराबरी	16
रूहानी बीमारियां	15
मम्मी से कुछ बातें तक़लीद पर	40

वक़्त कितनी तेज़ी से ख़त्म हो जाता है, एहसास ही नहीं होता। अभी कल ही की तो बात है, मरयम का पहला इश्यु आपके हाथों में आया था और अब देखिए, माशाअल्लाह, तीसरा इश्यु आपके सामने है। यक़ीन ही नहीं होता कि इस बीच तीन महीने हो गए।

वक़्त चीज़ ही ऐसी है, पकड़ लो तो ज़िन्दगी भी ख़ूबसूरत और आख़िरत भी और अगर छोड़ दो तो न इस दुनिया के और न उस दुनिया के। इसलिए सब से अच्छी बात तो बस यही है कि वक़्त का हाथ इस मज़बूती से पकड़ लिया जाए कि ये हम से आगे निकल ही न सके क्योंकि अगर एक बार हाथों से निकल गया तो फिर हाथ मलते रहने के अलावा और कोई चारा नहीं रहेगा। हमारे इमामों ने भी इसी बात पर ज़ोर दिया है कि हम अपना वक़्त किसी भी हालत में बर्बाद न करें।

इसलिए आईए हम और आप मिल कर एक फ़ैसला और वादा करते हैं कि ख़ुदा ने हमें जितनी भी ज़िन्दगी दी है उसे ग़नीमत और नेमत समझते हुए ज़रा सा भी बर्बाद नहीं करेंगे बल्कि इससे पूरा-पूरा फ़ाएदा उठाएंगे। इस तरह हमारी ज़िन्दगी भी ख़ूबसूरत और कामयाब बन जाएगी और आख़िरत भी, वरना ख़ुदा तो सवाल करेगा ना, कि ज़िन्दगी में क्या करके आए हो...

'मरयम' में छपे सभी लेखों पर संपादक की रज़ामन्दी हो, यह ज़रूरी नही है।
'मरयम' में छपे किसी भी लेख पर आपत्ति होने पर उसके खिलाफ़ कारवाई सिर्फ़ लखनऊ कोर्ट में होगी और 'मरयम' में छपे लेख और तस्वीरें 'मरयम' की प्रॉपर्टी हैं।
इसका कोई भी लेख, लेख का अंश या तस्वीरें छापने से पहले 'मरयम' से लिखित इजाज़त लेना ज़रूरी है। 'मरयम' में छपे किसी भी कन्टेंट के बारे में पूछताछ या किसी भी तरह की कारवाई प्रकाशन तिथी से 3 महीने के अंदर की जा सकती है। उसके बाद किसी भी तरह की पूछताछ और कारवाई पर हम जवाब देने के लिए मजबूर नहीं हैं।
संपादक 'मरयम' के लिए आने वाले कन्टेंट्स मे ज़रुरत के हिसाब से तबदीली कर सकता है।

Printer & publisher Nazar Abbas Rizvi printed at Imagine Grafix, 4-Valmiki Marg, Lalbagh, Lucknow and published from 234/22 Thawai Tola, Victoria Street, Chowk, Lucknow 226003 UP-India

Contact No.: +91-522-4009558, 9956620017, 9453826444, email: maryammonthly@gmail.com

औरतों की शान कुरआन में

इस्लाम में औरतों के सब्जेक्ट पर ग़ौर करने से पहले इस बात को सामने रखना बहुत ज़रूरी है कि इस्लाम ने उस वक़्त औरतों की शान, इज़्ज़त और उनके राइट्स के बारे में खुल्लम-खुल्ला हिमायत की है जब बाप अपनी बेटी को ज़िन्दा दफ़्न कर देते थे और इस दरिंदगी को अपने लिए इज़्ज़त और शराफ़त भी समझते थे। ये उस ज़माने की बात है जब औरत दुनिया के हर समाज में बिल्कुल बेकार सी चीज़ समझी जाती थी, लोग बड़ी आसानी और आज़ादी से औरतों का लेन-देन किया करते थे और उनकी राय की कोई क़ीमत नहीं थी। हद ये है कि यूनान के फ़लसफ़ी इस बात पर बहस कर रहे थे कि औरत को इन्सानों में शामिल भी किया जाए या नहीं। उनका ख़्याल था कि औरत एक ऐसी इन्सान नुमा मख़लूक़ है जिसे इस शक्ल में इन्सान की दिल-लगी के लिए पैदा किया गया है ताकि वह उससे हर तरह का फ़ायदा उठा सके, वरना औरत का इन्सानियत से कोई रिश्ता नहीं है।

आज औरतों की आज़ादी, बराबरी और वीमेन राइट्स के नारे लगाने वाले लोग दीन पर तरह-तरह के इल्ज़ाम लगाते हैं और इस हक़ीक़त को भूल जाते हैं कि औरतों के बारे में अज़ादी, बराबरी और वीमेन राइट्स का ख़्याल भी इस्लाम ही का दिया हुआ है। वरना इस्लाम ने औरत को ज़िल्लत के अंधेरों से निकाल कर इज़्ज़त की ऊँचाई पर न पहुँचा दिया होता तो आज कोई उसके बारे में इस अन्दाज़ से सोचने वाला भी न होता। यहूदी और ईसाई तो इस्लाम से पहले भी इन सब्जेक्टस पर बहस किया करते थे, उन्हें उस वक़्त औरतों की इस आज़ादी का ख़्याल क्यों नहीं आया और उन्होंने उस दौर में बराबरी का नारा क्यों नहीं लगाया? ये आज अचानक औरत की अज़मत का ख़्याल कहाँ से आ गया और उसके लिए हमदर्दी का इतना जज़्बा कहाँ से आ गया?!

हक़ीक़त में ये इस्लाम के बारे में एहसान फ़रामोशी के अलावा कुछ नहीं है कि जिसने तीरअन्दाज़ी सिखाई उसी को निशाना बना दिया, जिसने आज़ादी और बराबरी का नारा दिया उसी पर इल्ज़ाम लगा दिए।

बात सिर्फ़ ये है कि जब दुनिया को औरतों की आज़ादी का ख़्याल आया तो उसने सोचा कि आज़ादी का मतलब तो हमारे दिली मक़सद के ख़िलाफ़ है, आज़ादी का ये ख़्याल तो इस बात की दावत देता है कि हर मसले में औरतों की मर्ज़ी का ख़्याल रखा जाए, उन पर किसी तरह का दबाव न डाला जाए, वीमेन राइट्स का तक़ाज़ा ये है कि औरतों को मीरास में हिस्सा दिया जाए, उन्हें जागीरदारी और सरमाए में हिस्सेदार माना जाए और ये सब हमारे मक़सदों के ख़िलाफ़ है। इसलिए उन्होंने इसी आज़ादी और वीमेन राइट्स के नारे को बाक़ी रखते हुए अपना मतलब पूरा करने की एक नया रास्ता निकाला

और ये एलान करना शुरु कर दिया कि औरत की आज़ादी का मतलब ये है कि वह जिस के साथ चाहे चली जाए और उसके वीमेन राइट्स का मतलब ये है कि वह जितने मर्दों से चाहे रिश्ता बनाए। ये है मतलब आज के ज़माने के वीमेन राइट्स, आज़ादी और बराबरी के नारों का! इससे ज़्यादा आज के मर्दों को औरतों से और कोई दिलचस्पी नहीं है। ये औरत को हुकूमत की कुर्सी पर बिठाते हैं तो इसमें भी इनका कोई न कोई मक़सद होता है। यही वजह है कि वह मुल्क की टॉप लीडर होने के बाद भी किसी न किसी दूसरे की हाँ में हाँ मिलाती रहती है।

इस्लाम भी औरतों को आज़ादी और बराबरी देना चाहता है लेकिन मर्दों का खिलौना बनाकर नहीं। वह औरतों को आज़ादी और इन्तेख़ाब का हक़ देना चाहता है लेकिन अपनी शख़्सियत, हैसियत, इज़्ज़त और पाकीज़गी को बर्बाद करने के बाद नहीं। जब इस्लाम की निगाह में इस तरह का इख़्तियार मर्दों को भी हासिल नहीं है तो औरतों को कहाँ से हासिल हो जाएगा जबकि औरत की पाकीज़गी और शराफ़त की क़ीमत मर्द से ज़्यादा है। औरत की पाकीज़गी अगर एक बार चली जाए तो दोबारा वापस नहीं आती।

इस्लाम मर्दों से भी ये मुतालबा करता है कि जिन्सी ख़्वाहिशों के लिए क़ानूनी रास्तों को न छोड़ें और कोई क़दम ऐसा न उठाएं जो उनकी इज़्ज़त और शराफ़त के ख़िलाफ़ हो। इसीलिए उन सारी औरतों की पहचान करा दी गई है जिनसे जिस्मानी रिश्ते नहीं बनाए जा सकते। साथ ही उन सारी कन्डीशंस की तरफ़ भी इशारा कर दिया गया है जिनके बाद फिर दूसरा जिस्मानी रिश्ता बाक़ी नहीं रह जाता। ऐसे परफ़ैक्ट और केल्कुलेटेड सिस्टम ऑफ़ लाइफ़ के बारे में ये सोचना कि उसने एकतरफ़ा फ़ैसला किया है और औरतों के हक़ में नाइन्साफ़ी की है, ख़ुद इस्लाम के हक़ में नाइन्साफ़ी बल्कि एहसान फ़रामोशी है वरना इस्लाम से पहले कोई इस औरत नाम की मख़लूक़ को पूछने वाला भी नहीं था और दुनिया की हर क़ौम में उसे ज़ुल्म का निशाना बना लिया गया था।

आइए देखते हैं कि इस्लाम अपनी किताब 'क़ुरआने करीम' में औरत और मर्द के बारे में क्या फ़रमाता है:-

"उसकी निशानियों में से ये भी है कि उसने तुम्हारा जोड़ा तुम्हीं में से पैदा किया है ताकि तुम्हें उससे सुकून मिल सके और फिर तुम्हारे बीच मुहब्बत और रेहमत क़रार दी है।" (1)

इस आयत में दो ख़ास बातों की तरफ़ इशारा किया गया है:-

1- औरत, इन्सानों ही का एक हिस्सा है। उसे मर्द का जोड़ा बनाया गया है और उसकी हैसियत मर्द से कम नहीं है।

2- औरत को सिर्फ़ मर्द की ख़िदमत के लिए पैदा नहीं किया गया है। औरत मर्द के लिए सुकून का सबब है और मर्द-औरत के दरमियान आपसी मुहब्बत और उलफ़त ज़रूरी है क्योंकि ये एकतरफ़ा

> आज औरतों की आज़ादी, बराबरी और वीमेन राइट्स के नारे लगाने वाले लोग दीन पर तरह-तरह के इल्ज़ाम लगाते हैं और इस हक़ीक़त को भूल जाते हैं कि औरतों के बारे में अज़ादी, बराबरी और वीमेन राइट्स का ख़्याल भी इस्लाम ही का दिया हुआ है। वरना इस्लाम ने औरत को ज़िल्लत के अंधेरों से निकाल कर इज़्ज़त की ऊँचाई पर न पहुँचा दिया होता तो आज कोई उसके बारे में इस अन्दाज़ से सोचने वाला भी न होता।

मामला नहीं है।

"औरतों के लिए वैसे ही हुक़ूक़ भी हैं जैसी ज़िम्मेदारियां हैं और मर्दों को उन पर एक इम्तियाज़ हासिल है।" (2)

इस आयत में जो मर्दों को एक और दर्जा दिया गया है उसका मतलब ये नहीं है कि उन्हें औरतों का पूरा-पूरा मालिक बना दिया गया है बल्कि यहां मर्दों को उनकी ज़िम्मेदारी का एहसास दिलाया जा रहा है क्योंकि मर्दों की बनावट में ये सलाहियत रखी गई है कि वह औरतों की ज़िम्मेदारी संभाल सकें। इसी वजह से उन्हें नानो-नफ़्क़ा और घर के ख़र्चों का ज़िम्मेदार बनाया गया है।

"ख़ुदा ने उनकी दुआ को क़ुबूल कर लिया कि मैं तुम में से किसी भी अमल करने वाले के अमल को बबार्द नहीं करता चाहे वह मर्द हो या औरत।" (3)

यहाँ पर औरत-मर्द, दोनों के अमल को बराबर बताया गया है।

"ख़बरदार! जो ख़ुदा ने कुछ लोगों को कुछ दूसरों से ज़्यादा दिया है उसकी तमन्ना और आरज़ू न करना। मर्दों के लिए वह हिस्सा है जो उन्होंने कमाया है।" (4)

यहाँ भी दोनों को एक ही तरह की हैसियत दी गई है और दोनों को एक दूसरे की फ़ज़ीलत पर नज़र लगाने से रोक दिया गया है।

"उनके हक़ में दुआ करते रहना कि परवरदिगार उन दोनों (वालदैन) पर उसी तरह रहमत नाज़िल फ़रमा जिस तरह उन्होंने बचपने में मुझे पाला है।" (5)

इस आयत में माँ-बाप को बराबर का दर्जा दिया गया है, दोनों के साथ एहसान को भी ज़रूरी क़रार दिया गया है और दोनों के हक़ में दुआ करने पर भी ज़ोर दिया गया है।

"ऐ ईमान वालो! तुम्हारे लिए जाएज़ नहीं है कि ज़बरदस्ती औरतों के वारिस बन जाओ और ख़बरदार! उन्हें मना भी न करो कि जो कुछ उनको दे दिया है, उसका कुछ हिस्सा ले लो। मगर ये कि खुले तौर पर बदकारी करें और उनके साथ नेक बर्ताव करो। अब अगर तुम उन्हें नापसन्द भी करते हो तो हो सकता है कि तुम किसी चीज़ को नापसन्द करते हो और ख़ुदा उसी में बेपनाह ख़ैर क़रार दे दे।" (6)

"जब तुम औरतों को तलाक़ दो और वह इद्दत की मुद्दत के ख़त्म होने के क़रीब पहुंच जाएं तो या उन्हें इस्लाह और हुस्ने मुआशेरत के साथ रोक लो या उन्हें हुस्ने सुलूक के साथ आज़ाद कर दो और ख़बरदार नुक़सान पहुँचाने की ग़रज़ से उन्हें न रोकना कि उन पर ज़ुल्म करो कि जो ऐसा करेगा वह ख़ुद अपने नफ़्स पर ज़ुल्म करेगा।" (7)

इन दोनों आयतों में पूरी आज़ादी का एलान किया गया है। यहाँ आज़ादी का मक़सद इज़्ज़त और शराफ़त की हिफ़ाज़त करना है, साथ ही जान-माल दोनों एतेबार से इख़्तियार वाला होना है। उसके बाद ये भी साफ़ कर दिया गया है कि औरतों पर ज़ुल्म, हक़ीक़त में उन पर ज़ुल्म नहीं है बल्कि अपने ही ऊपर ज़ुल्म है क्योंकि इस सूरत में औरतों की तो सिर्फ़ दुनिया ख़राब होती है लेकिन मर्द इससे अपनी आख़िरत भी ख़राब कर लेता है जो दुनिया की ख़राबी से कहीं ज़्यादा बदतर है।

"मर्द, औरतों के हाकिम और निगराँ हैं उन फ़ज़ीलतों की बिना पर जो ख़ुदा ने कुछ को कुछ पर दी हैं और इस वजह से क्योंकि उन्होंने औरतों पर अपना माल ख़र्च किया है।" (8)

इस आयत से बिल्कुल साफ़ है कि इस्लाम का मक़सद मर्द को बेलगाम मालिक बना देना और औरत से उसकी आज़ादी को छीन लेना नहीं है बल्कि उस ने मर्द को कुछ ख़ुसूसियतों की वजह से घर का ज़िम्मेदार और औरत की जान-माल और इज़्ज़त-आबरू का मुहाफ़िज़ क़रार दे दिया है। साथ ही इस छोटी सी हाकिमियत या ज़िम्मेदारी को भी यूं ही मर्द को नहीं दे दिया गया है बल्कि उसके मुक़ाबले में उसे औरत के सारे ख़र्चों का ज़िम्मेदार बनाया है।

खुली हुई बात है कि अगर कोई आफ़िसर या किसी कारख़ाने का मालिक सिर्फ़ तनख़ाह की बिना पर हाकिमियत के बेशुमार इख़्तियर हासिल कर लेता है और उसे कोई इन्सानियत की तौहीन भी क़रार नहीं देता और दुनिया का हर समाज इसी पॉलीसी पर अमल करता है तो अगर मर्द ज़िन्दगी की सारी ज़िम्मेदारियाँ क़ुबूल करने के बाद औरत पर पाबन्दी लगा दे कि उसकी इजाज़त के बिना घर से बाहर न जाए और उसके लिए वह सब कुछ फ़राहम कर दे कि उसे बाहर न जाना पड़े तो इसमें तो कोई ताज्जुब वाली बात नहीं है। ये तो एक तरह का बिल्कुल साफ़ मामला है जो शादी की शक्ल में सामने आता है यानी मर्द का कमाया हुआ माल औरत का हो जाता है और औरत की ज़िन्दगी का

सरमाया मर्द का हो जाता है। मर्द, औरत की ज़रूरतें पूरी करने के लिए घंटों मेहनत करता है और औरत मर्द को सुकून फ़राहम करने के लिए घर को जन्नत बना देती है।

इतने नेचॅरल सरमाए से इस क़दर मेहनती सरमाए का तबादला क्या औरत पर जुल्म और नाइन्साफ़ी कही जा सकती है? जबकि मर्द के सुकून में भी औरत बराबर की हिस्सेदार होती है और ये जज़बा एकतरफ़ा नहीं होता। उधर औरत, मर्द के कमाए हुए माल में से जो ख़र्च करती है उसमें मर्द को कोई हिस्सा नहीं मिलता है। मर्द को ये ज़िम्मेदारी उसकी मर्दाना ख़ुसूसियतों और उसकी नेचॅरल सलाहियतों की वजह से दी गई है वरना ये तबादला मर्दों पर जुल्म हो जाता। उन्हें ये शिकायत होती कि औरत ने उन्हें ज़रा सा सुकून दिया है और उसके मुक़ाबले में उन पर ज़िम्मेदारियों का कितना बोझ लाद दिया गया है। ये ख़ुद इस बात की बहुत बड़ी दलील है कि ये कोई कमोडिटी या माल का सौदा नहीं है बल्कि सलाहियतों की बुनियाद पर कामों को बांटा गया है। औरत जितनी मर्द की ख़िदमत कर सकती है उसका ज़िम्मेदार औरत को बना दिया गया है और मर्द, औरत की जितनी ख़िदमत कर सकता है उसका ज़िम्मेदार मर्द को बना दिया गया है। ये कोई ऐसा मामला नहीं है कि इस्लाम पर इल्ज़ाम लगा दिया जाए कि उसने नाइन्साफ़ी की है क्योंकि मर्दों को औरतों का मालिक बना दिया है और इस तरह वीमेन राइट्स का कोई ख़्याल ही नहीं रखा है।

हां, ये ज़रूर है कि मुसलमानों में ऐसे मर्द बहरहाल पाए जाते हैं जो मिज़ाजी तौर पर ज़ालिम, बेरहम और जल्लाद होते हैं और जब उन्हें अपनी जल्लादी दिखाने का कोई मौक़ा नहीं मिलता है तो अपनी औरतों को ही अपने जुल्म का निशाना बना कर अपने ही घर में अपनी जल्लादी दिखाने लगते हैं क्योंकि औरतें जिस्मानी तौर पर कमज़ोर होने की वजह से उनका मुक़ाबला नहीं कर पातीं। साथ ही उन पर जुल्म करने में किसी ऐसे ख़तरे का डर भी नहीं होता जो किसी दूसरे मर्द पर जुल्म करने में हो सकता है। इसके बाद ऐसे लोग अपने जुल्म का जवाज़ क़ुरआने मजीद में तलाश करते हैं। इनका ख़याल ये होता है कि क़ुरआन ने मर्दों को औरतों का बेलगाम मालिक बना दिया है। हालांकि क़ुरआन ने साफ़-साफ़ दो फ़ैक्टर्स की तरफ़ इशारा कर दिया है, एक मर्द की ज़ाती ख़ुसूसियत है और दूसरे औरत के ख़र्चों की ज़िम्मेदारी। खुली हुई बात है कि इन दोनों चीज़ों में किसी न किसी तरह की मिलकियत पाई जाती है, न कि जल्लादपन। बल्कि शायद बात इसके उलट नज़र आए कि मर्द में एक नेचॅरल फ़ैक्टर था तो उसे उस फ़ैक्टर से फ़ाएदा उठाने की वजह से एक ज़िम्मेदारी का बोझ उठाने पर मजबूर किया गया, इस तरह से कि अगर उसने कुछ कमाया तो उससे कहा गया कि इसमें औरत का भी हिस्सा है। अब औरत ऐसी मालिका है जो घर के अन्दर बैठी रहे और मर्द ऐसा ख़ादिम है जो सुबह से शाम तक अपने घर वालों की रोज़ी-रोटी की तलाश में जुटा रहे। हक़ीक़त तो ये है कि ये औरत के औरत होने की क़ीमत है जिसके मुक़ाबले में किसी दौलत, शोहरत, मेहनत और हैसियत की कोई क़द्रो-क़ीमत नहीं है।

1-रूम/21, 2-बक़रा/228, 3-आले इमरान/195, 4-निसा/32, 5-असरा/24, 6-निसा/19, 7-बक़रा/231, 8-निसा/34

काला बाज़ारी

■ शहीद मुतह्हरी

बड़ी फ़ैमिली होने की वजह से इमाम सादिक़[अ] के घर के ख़र्चे बहुत बढ़ चुके थे। जिन्हें पूरा करने के लिए तिजारत और दूसरे तरीक़ों से रोज़ी-रोटी हासिल करने के लिए इमाम[अ] की फ़िक्र बढ़ गई थी। इसलिए आपने अपने ग़ुलाम मुसादिफ़ को हज़ार दीनार देते हुए उससे कहा, "यह हज़ार दीनार लो और तिजारत के लिए मिस्र के सफ़र के लिए तैयार हो जाओ"।

मुसादिफ़ ने उस रक़म से मिस्र के बाज़ार में ज़्यादा बिकने वाली चीजें ख़रीदीं और ताजिरों के एक क़ाफ़िले के साथ मिस्र के लिए निकल पड़ा। जैसे ही ये लोग मिस्र के क़रीब पहुँचे उनकी मुलाक़ात ताजिरों के एक दूसरे क़ाफ़िले से हुई जो मिस्र से वापस आ रहा था। दोनों काफ़िले के ताजिरों ने जब आपस में बातचीत की तो उन्हें पता चला कि जो सामान बेचने के लिए उनके पास है वह मिस्र के बाज़ार में बड़ी मुश्किल से मिलता है। दौलतमन्द ताजिर ये ख़बर सुनते ही अपनी ख़ुश क़िस्मती पर फ़ख़्र करने लगे। उनका अन्दाज़ा था कि उनका माल आम लोगों की ज़रूरत के काम आने वाला है। इसलिए बाज़ार में इस माल की कमी की वजह से लोग उनके सामान को ज़्यादा से ज़्यादा क़ीमत पर ख़रीदने के लिए मजबूर हो जाएंगे। इस तरह उन्हें अपने माल की मुँह माँगी क़ीमत मिल जाएगी।

सारे ताजिरों ने मिलकर फ़ैसला किया कि सौ फ़ीसद प्रॉफ़िट से कम में अपना माल नहीं बेचेंगे। जैसे ही ये लोग मिस्र में दाख़िल हुए, उन्हें मालूम हो गया कि जो ख़बर रास्ते में मिली थी वह बिल्कुल सच है।

इन ताजिरों ने मिस्र के बाज़ार में काला बाज़ारी का माहौल पैदा कर दिया और किसी ने भी दुगनी क़ीमत से कम में अपना माल नहीं बेचा क्योंकि बाज़ार में उस माल की कमी थी और ज़रूरत ज़्यादा थी। इसलिए कुछ ही दिनों में उनका सारा माल दुगुने रेट पर बिक गया।

दूसरे ताजिरों की तरह मुसादिफ़ भी हज़ार दीनार लिए हुए मदीना वापस आ गया। वह ख़ुशी-ख़ुशी इमाम सदिक़[अ] की ख़िदमत में आया और हज़ार-हज़ार दीनार की दो थैलियाँ आपके सामने लाकर रख दीं। इमाम[अ] ने मुसादिफ़ से पूछा, "यह क्या है?"

मुसादिफ़ ने जवाब देते हुए कहा, "इन में से एक थैली वह है जो आपने मुझे दी थी और दूसरी थैली में मुनाफ़े की रक़म है जो अस्ल रक़म के बराबर है।"

इमाम ने कहा, "मुसादिफ़! मुनाफ़ा तो बहुत ज़्यादा है। ज़रा बताओ तो इतना ज़्यादा मुनाफ़ा तुम लोगों को कैसे हो गया?"

"बात ये है कि मिस्र के क़रीब पहुँचने के बाद हम लोगों को ख़बर मिली कि मिस्र के बाज़ार में इस माल की बहुत कमी है जो हम लोगों के पास है। इसलिए हमने आपस में फ़ैसला कर लिया कि सौ फ़ीसद मुनाफ़े से कम में अपना माल नहीं बेचेंगे। फिर हम लोगों ने ऐसा ही किया और सौ फ़ीसदी फ़ाएदे पर अपना माल बेचकर वापस चले आए।"

"सुब्हानल्लाह! तुम लोगों ने ऐसी हरकत की है! तुम ने फ़ैसला किया कि मुसलमानों के बीच काला बाज़ारी का माहौल पैदा करोगे और आपस में क़समें भी खाईं कि सौ फ़ीसद से कम में अपना माल नहीं बेचोगे। नहीं, मैं ऐसी तिजारत और ऐसा मुनाफ़ा बिल्कुल पसन्द नहीं करता हूँ।"

इसके बाद इमाम[अ] ने एक थैली उठाई और कहा, "यह मेरी पूँजी है।" दूसरी थैली उसी जगह पड़ी रहने दी और कहा, "इस दूसरी थैली से जिसमें सौ फ़ीसद मुनाफ़े की रक़म है, मेरा इससे कोई मतलब नहीं है।"

फिर इमाम[अ] ने मुसादिफ़ से इरशाद फ़रमाया, "ऐ मुसादिफ़! हलाल रोज़ी के मुक़ाबले में तलवार चलाना आसान है यानी तलवार चलाना आसान है मगर हलाल रोज़ी हासिल करना आसान नहीं है।" (सच्ची कहानियाँ)

मासूमा ए कुम

■ मिनहाल हैदर ज़ैदी

दुनिया भर में बेमिसाल, पाकदामनी और पाकीज़गी, तहारत और इस्मत की मालिका, इन्सानी तारीख़ में बेहतरीन आइडियल ख़वातीन में से एक ख़ातून, मासूम-ए-कुम हज़रत फ़ातिमा[अ०] हैं जिनकी ज़िन्दगी सारी औरतों के लिए आइडियल है, जिनकी क़ब्र की ज़ियारत भी जन्नत की बशारत है और यही नहीं बल्कि जिनकी क़ब्र की ज़ियारत हज़रत फ़ातिमा ज़हरा[अ०] की क़ब्र की ज़ियारत का सवाब रखती है।

विलादतः आपकी पैदाइश पहली ज़ीक़ादा 183 हि० को हुई थी। आप सातवें इमाम हज़रत मूसा काज़िम[अ०] की बड़ी बेटी थीं।

नाम और लक़बः आपका नाम फ़ातिमा था लेकिन आप मासूम-ए-कुम के लक़ब से मशहूर हुईं और ये लक़ब आपको आपके भाई हज़रत इमाम रज़ा[अ०] ने दिया था। आपका एक दूसरा लक़ब करीमा-ए-अहलेबैत भी है। इमाम रज़ा[अ०] ही का इरशाद है, ''जिसने क़ुम में मासूमा की ज़ियारत की, ऐसे ही है जैसे उसने मेरी ज़ियारत की।''

ईरान की तरफ़ सफ़रः अभी आपकी उम्र दस साल ही की थी कि आपके वालिदे बुज़ुर्गवार इमाम मूसा काज़िम[अ०] को हारून रशीद ने क़ैदख़ाने में ज़हर से शहीद करवा दिया था। इसके बाद मामून ने अपने बाप के नक़्शेक़दम पर चलते हुए आठवें इमाम को भी अहलेबैत से जुदा कर दिया और अपने पास मशहद बुला लिया।

मासूमा-ए-क़ुम ने तक़रीबन एक साल तक ये सदमा बर्दाश्त किया लेकिन जब सब्र न हो सका तो आप अपने दूसरे भाईयों और भतीजों के साथ अपने भाई के दीदार के लिए ईरान की तरफ़ रवाना हो गईं। सफ़र की मुश्किलों को बर्दाश्त करते हुए आप 'सावा' शहर पहुँचीं। वहीं पर दुश्मनों ने हमला कर दिया जिसमें आपके 23 भाई-भतीजे शहीद हो गए और आप उनके ग़म में बीमार हो गईं।

क़ुम की तरफ़ः जब क़ुम वालों को इस बात की ख़बर हुई तो वह सावा गए और मासूम-ए-क़ुम को बड़ी ही इज़्ज़त और एहतेराम के साथ क़ुम ले आए। 22 रबीउल अव्वल 201 हि० की तारीख़ थी जब आप क़ुम में दाख़िल

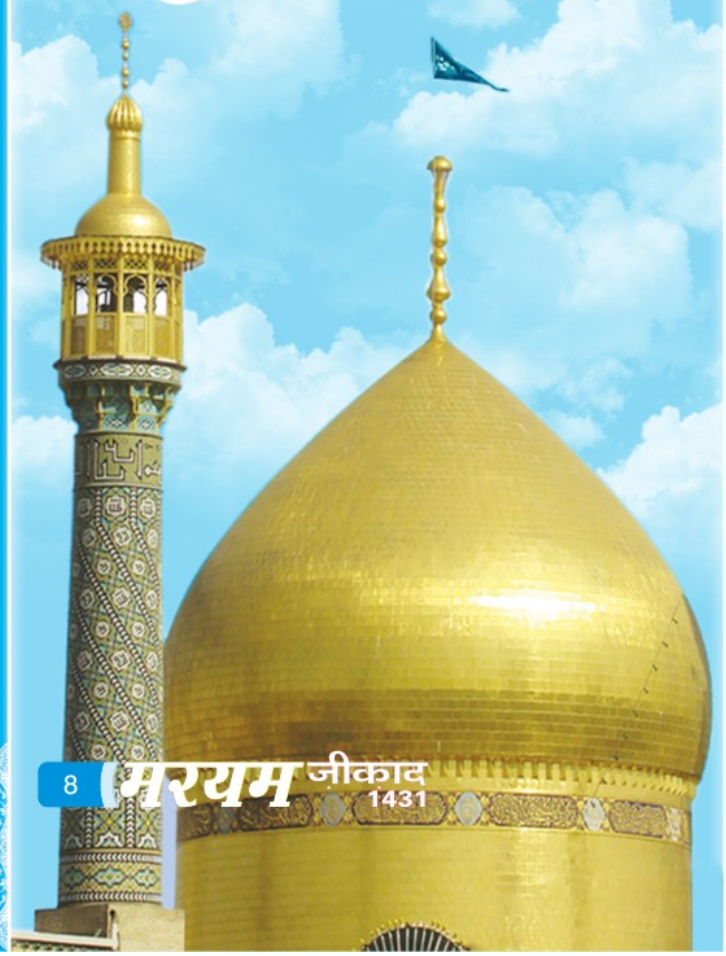

हुईं। शहर क़ुम में ख़ानदाने अशअरी के सरदार, मूसा बिन ख़ज़रज ख़ुद नाक़े की मिहार थामे हुए थे और लोग नाक़े के चारों तरफ़ चल रहे थे। यहाँ तक कि आपकी सवारी उस जगह रुक गई जिसे "मैदाने मीर" के नाम से जाना जाता है। इस तरह मूसा बिन ख़ज़रज को आपकी सत्तरह दिन की मेज़बानी का शरफ़ हासिल हुआ।

वफ़ातः आप इसी ग़म और बीमारी की हालत में मूसा बिन ख़ज़रज के घर में 17 दिन रूकने के बाद 10 रबीउस्सानी 201 हि० को अपने भाई से मुलाक़ात किए बग़ैर अपने वतन से दूर इस दुनिया से रुख़सत हो गईं। आपकी वफ़ात से सारा क़ुम सोग में डूब गया। जनाज़ा बड़ी शानो-शौकत से उठाया गया, जब दफ़न का वक़्त आया तो लोगों में बहस होने लगी कि आपको क़ब्र में कौन उतारे? आख़िरकार एक बुज़ुर्ग और परहेज़गार, क़ादिर नाम के एक शख़्स पर सब लोग राज़ी हो गए लेकिन इससे पहले कि वह नमाज़ पढ़ाते, दो नक़ाबपोश ज़ाहिर हुए और जनाज़े को क़ब्र में रख कर आँखों से ओझल हो गए। ये दो नक़ाब पोश हज़रत इमाम रज़ा और इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०] के अलावा कोई और नहीं थे।

आपकी वफ़ात के बाद मूसा बिन ख़ज़रज के घर को मदरसा बना दिया गया जो 'मदरसा-ए-सैय्यदा' के नाम से मशहूर हो गया। जहाँ आप इबादत करती थीं उस जगह को "बैतुन्नूर" कहा जाने लगा।

मासूमा की ज़ियारत की फ़ज़ीलतः इमाम रज़ा[अ०] फ़रमाते हैं, "जो शख़्स भी इनकी ज़ियारत करेगा उसे जन्नत नसीब होगी।"

इमाम सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं, "...बहुत जल्द मेरी औलाद में से एक ख़ातून क़ुम में दफ़न होंगी, जो भी उनकी ज़ियारत करेगा उस पर जन्नत वाजिब है।"

इमाम सादिक़[अ०] फ़रमाते हैं, "...ख़ुदावन्दे आलम ने किसी वजह से हज़रत फ़ातिमा ज़हरा[स०] की क़ब्र को लोगों की निगाहों से छुपाकर रखा है और इसकी जगह मासूमा-ए-क़ुम की क़ब्र को वही मुक़ाम और सवाब दिया है।"

मसूमा का रौज़ाः आपको दफ़न करने के बाद मूसा बिन ख़ज़रज ने आपकी क़ब्र पर एक चटाई डाल दी। इसके बाद ज़ैनब बिन्ते इमाम मुहम्मद तक़ी[अ०] ने आपकी क़ब्र पर गुम्बद बनावाया और फिर ज़माना गुज़रने के साथ-साथ हरम और गुम्बद बार-बार बनते रहे और जगह भी ज़्यादा होती रही। इस तरह 1375 हिजरी में चाँदी की ज़रीह बनवाई गई और कुछ सालों पहले इमाम ख़ुमैनी के नाम पर एक बहुत ख़ूबसूरत और लम्बा-चौड़ा हाल बनवाया गया। साथ ही 17 रबीउल अव्वल 1426 को उलमा और मराजे की मौजूदगी में उस गुम्बद को भी लोगों के लिए खोला गया जो पूरी तरह सोने से बना हुआ है। इस वक़्त मासूम-ए-क़ुम के नाम पर एक बहुत बड़ी लाइब्रेरी का काम तेज़ी से चल रहा है। आपकी क़ब्र अहलेबैत के चाहने वालों, उलमा और ज़ायरों के लिए अक़ीदत का मरकज़ बनी हुई है और दुनिया भर के शियों की ज़ियारतगाह है।

इमाम अली रज़ा[अ०]
की विलादत के
खुशियों भरे इस
खूबसूरत मौक़े पर
TAHA FOUNDITON
आप सब
को दिली मुबारकबाद
पेश करता है।

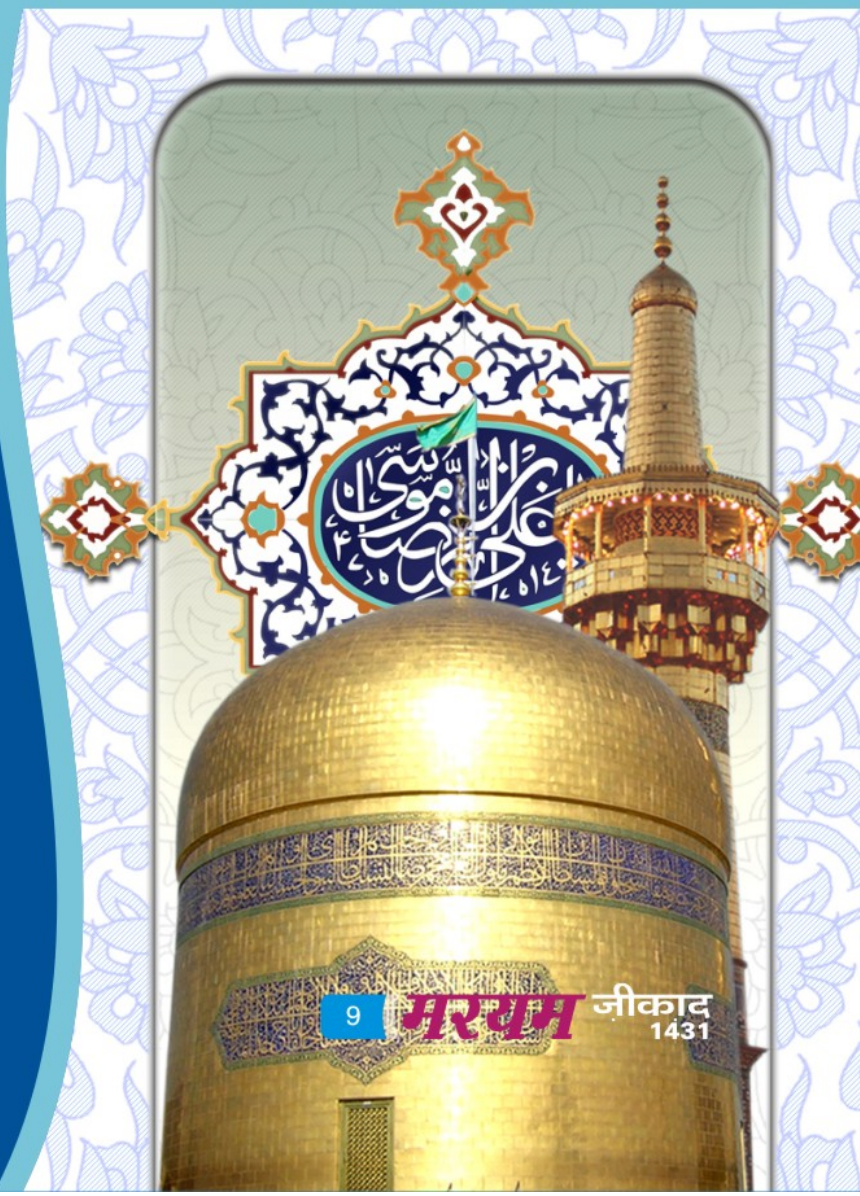

औरतें इमाम ख़ुमैनी की नज़र में

बीसवीं सदी के बड़े-बड़े सियासी-समाजी कारनामों और इस्लामी इन्क़ेलाब में औरतों की भरपूर शिरकत ने इस्लामी हलक़ों में औरतों के बारे में समाजी बहसों के दायरे में एक नई सोच पैदा की है। आज दुनिया की आबादी का आधा बड़ा हिस्सा औरतों से मिलकर बनता है। इसलिए उनकी ख़ुसूसियतों, सलाहियतों और ताक़त को पहचान लिया जाए तो इन्सानी ज़िन्दगी में ये हिस्सा बड़ा ही अहम रोल अदा कर सकता है।

औरतों के सिलसिले में जो ख़्यालात पाए जाते रहे हैं वह बड़े ही अलग-अलग और पैराडॉक्सिकल हैं जिसकी बुनियादी वजह फ़ंडामेंटलिज़्म और माडर्न स्कूल ऑफ़ थॉटस हो सकते हैं। इस्लाम ने नबीए अकरम[स०] की बेसत के शुरूआती मरहलों से ही वीमेन राइट्स को अपनी टीचिंगस में सब से ऊपर रखा है। साथ ही औरतों की क्रिएटिव और मिज़ाजी ख़ुसूसियतों को ध्यान में रखते हुए उनकी इन्सानी हक़ीक़त को मर्दों के बराबर क़रार दिया है। इमाम ख़ुमैनी[रह०] के लफ़्ज़ों में "इस्लाम ने औरत को सिर्फ़ एक 'चीज़' के दर्जे से निकाल कर बाक़ाएदा एक 'शख़सियत' दी है और उसको उसका हक़ीक़ी मुक़ाम दिलाया है।" औरत एक पाकीज़ा वुजूद है मगर अफ़सोस के साथ कहना पड़ता है कि इन्सानी तारीख़ के लम्बे दौर में शैतानों की हुक्मरानी की वजह से पहले भी और इस माडर्न दौर में भी अलग-अलग तरह से उसको ज़िल्लत और हिक़ारत के साथ कनीज़ या ख़िदमतगुज़ार की ज़िन्दगी बसर करने पर मजबूर किया जाता रहा है। इसकी सिर्फ़ ज़ाहिरी शक्ल-सूरत पर नज़र रखी गई और लोग ऐशो-मस्ती के खिलौनों की तरह उस से खेलते रहे, ख़ास कर आज के इस सिविलाइज़्ड और माडर्न सोसाइटी में तो फ़ैशन और आज़ादी के नाम पर उससे बद्तरीन शक्ल में फ़ाएदा उठाया जा रहा है। औरत के पाकीज़ा पहलुओं को बिल्कुल नज़रअन्दाज़ कर दिया गया है और मज़े की बात तो ये है कि सुनहरी शमशीर से औरत का गला काटने वाले यही लोग वीमेन राइट्स और आज़ादी के अलमबरदार बने हुए हैं। उधर अपनी हक़ीक़त और मुक़ाम से नाआशना ख़्वातीन का एक गिरोह उनकी "शैतानी आयात" में अपनी रिहाई और निजात का रास्ता तलाश कर रहा है, इस बात से बेख़बर कि ये लोग उनको ज़िन्दगी नहीं मौत के दलदल में ढकेल देने के चक्कर में हैं। जिस तरह अरब के जिहालत के दौर के बाद रसूले इस्लाम[स०] की आसमानी टीचिंग्स और जनाबे ख़दीजा, उम्मे सलमा, असमा बिंते उमैस, सुमय्या, फ़िज़्ज़ा और ख़ासकर हज़रत फ़ातिमा ज़हरा[स०] की सीरत और ज़िन्दगी ने चौदह सौ साल पहले औरतों की ज़िन्दगी में एक इन्क़ेलाब बरपा कर दिया था,

हमारी ग़ैरतदार और मोहतरम ख़्वातीन ने साबित कर दिया कि वह पश्चिमी दुनिया की पुरफ़रेब साज़िशों का शिकार नहीं हुई हैं। उन्होंने दुनिया को दिखा दिया है कि वह पाकीज़गी और पाकदामनी का एक ऐसा मज़बूत क़िला हैं जहां से वह मुल्क और समाज को अच्छे और तरबियत याफ़्ता फ़रज़न्द और शर्मो-हया की पैकर बेटियाँ पेश करेंगीं....

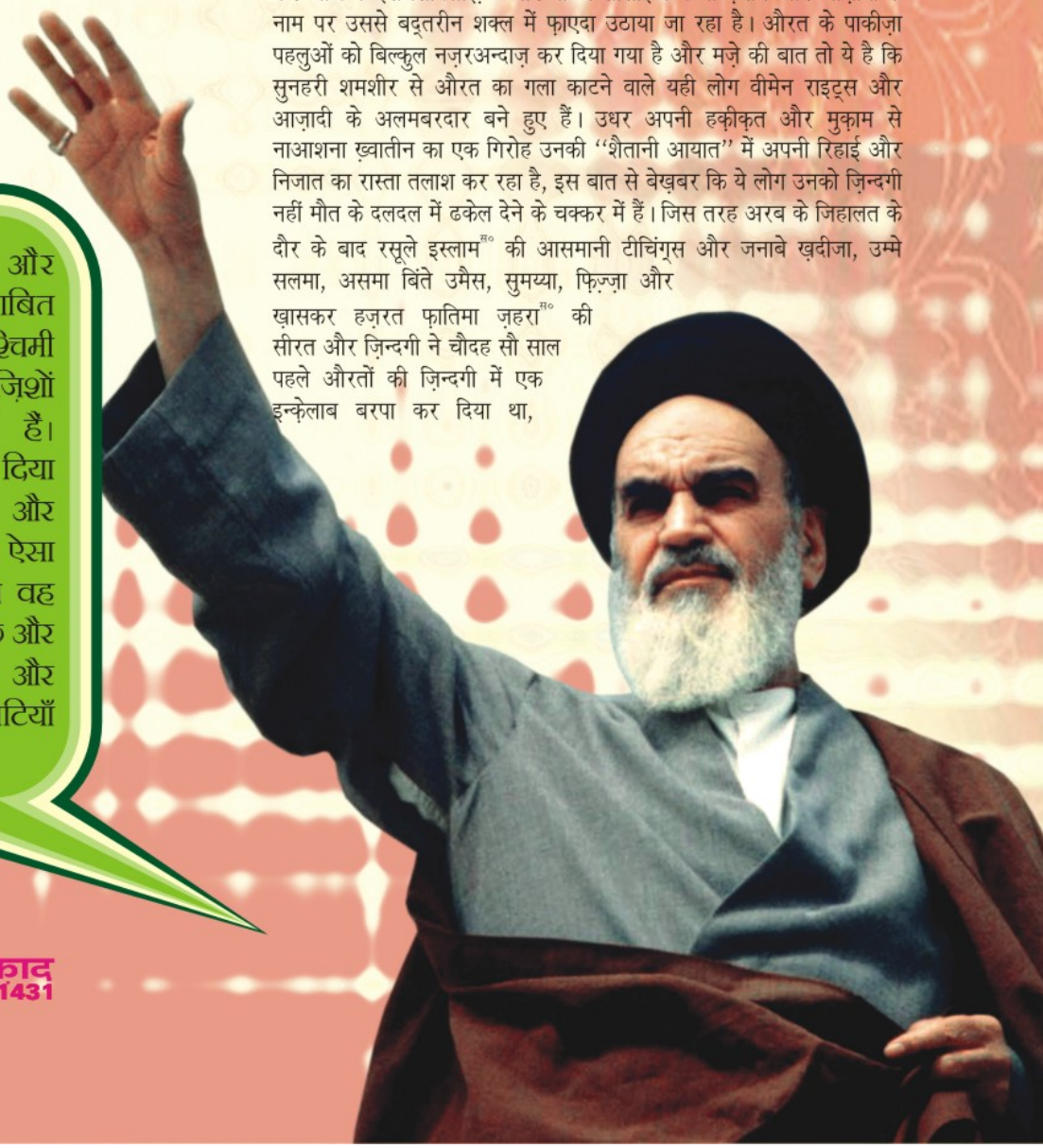

आज के दौर में इस्लामी इन्क़ेलाब की कामयाबी के बाद एक बार फिर औरतों के लिए आज की जिहालत और साम्राजी क़ैद से रिहाई की राहें खुली हैं और औरत का "हक़ीक़ी इलाही चेहरा" दुनिया के सामने नमूदार हुआ है। इसमें कोई शक नहीं कि औरत के इस चेहरे की तस्वीरकशी में इमाम ख़ुमैनी[रह॰] ने बड़ा ही अहम रोल अदा किया है। वह अपने पैग़ामों में कहा करते थे, "मैं जवान लड़कों और लड़कियों से चाहता हूँ कि वह अपनी आज़ादी, सेल्फ़-इंडिपेंडेंस और इन्सानी मेयार को, चाहे इसके लिए परेशानियां ही क्यों न उठाना पड़ें, वेस्टर्न कल्चर उसके आवारा मुल्कों और क़ौमों के ज़रिए खोले गए बुराईयों के अड्डों में जाने और ऐशो-इशरत और अय्याशी की ज़िन्दगी गुज़ारने पर क़ुरबान न करें।"

जब वह अपनी बात इस्लामी औरतों के दिलों में उतारने में कामयाब हो जाते हैं तो दुनिया के सामने पूरे फ़ख़्र के साथ एलान करते हैं, "हमारी ग़ैरतदार और मोहतरम ख़वातीन ने साबित कर दिया कि वह पश्चिमी दुनिया की पुरफ़रेब साज़िशों का शिकार नहीं हुईं। उन्होंने साबित कर दिया कि वह पाकीज़गी और पाकदामनी का एक ऐसा मज़बूत क़िला हैं जहां से वह मुल्क और समाज को अच्छे और तरबियत याफ़्ता फ़रज़न्द और शर्मो-हया की पैकर बेटियाँ पेश करेंगीं। ये वह औरतें हैं जो उन राहों पर एक क़दम भी आगे बढ़ने को तैयार नहीं हैं जो बड़ी ताक़तों ने उनकी बर्बादी के लिए उनके सामने खोल रखी हैं।"

एक पाकी-पाकीज़ा मिसाली समाज को बनाने में माँ की हैसियत से औरतों का जो रोल है उसकी अहमियत से कोई इन्कार नहीं कर सकता। इश्क़-मुहब्बत और ईसारो-क़ुर्बानी की पैकर "माएं" ही ऐसे बच्चों की परवरिश कर सकती हैं जो इन्सानियत के सबसे ऊँचे मुक़ाम पर खड़े हों। एक अच्छा इन्सान बनाने से अच्छा और कौन सा काम हो सकता है?! और ख़ुदा ने ये अज़ीम ख़िदमत औरतों को दी है कि वह ख़ुद को इन्सानित के सबसे ऊँचे मुक़ाम पर लेकर जाएं और फिर इन्सान कहलाने के लाएक़ बच्चे समाज को दें।

इमाम ख़ुमैनी[रह॰] इस बारे में औरतों से फ़रमाते हैं, "आपकी आग़ोश एक स्कूल है जिसमें आपको अज़ीम जवानों की परवरिश करना है। इसलिए आप ख़ुद को अच्छे अख़्लाक़ से संवारिए ताकि आपके बच्चे आपकी आग़ोश में अच्छे और कामयाब इन्सान बन सकें।"

दूसरी जगह फ़रमाते हैं, "अपने बच्चों की अच्छी और दीनी परवरिश कीजिए ताकि वह अच्छे इन्सान बन सकें।"

और इसकी वजह भी बयान कर दी है, "ये लोग इस्लाम के फ़रज़न्द हैं, इसके बाद इस्लाम और आपके मुल्क की तक़दीर इन के ही हाथों में होगी।" ये जो बात कही गई है कि 'माएं एक हाथ से गहवारा हिलाती हैं और दूसरे हाथ से दुनिया को चलाती हैं' ये इसीलिए है कि आइन्दा नस्लों की परवरिश के सिलसिले में माँओं का बड़ा ही अहम रोल है। माँ की आग़ोश इमाम ख़ुमैनी[रह॰] की नज़र में एक स्कूल और मकतब से भी ज़्यादा ख़ास है। आप फ़रमाते हैं, "माँ की आग़ोश सबसे बड़ा स्कूल है जिसमें बच्चा परवरिश पाता है। वह जो कुछ माँ से सुनता और सीखता है उससे कहीं बढ़कर है जो वह अपने टीचर से सीखता है।"

इस बारे में एक और ख़ास बात ये है कि माँ अपने नौनिहालों की तरफ़ से उम्र के किसी भी हिस्से में ग़ाफ़िल नहीं होती। उसकी निगाहें हर आन अपने बच्चों का तवाफ़ किया करती हैं। ये उनकी मामता के ख़िलाफ़ है कि वह उनको उनके हाल पर छोड़ दें और उनकी तरफ़ से बेपरवा हो जाएं।

इमाम ख़ुमैनी[रह॰] ने औरतों को बार-बार नसीहत की है कि आप अपने बच्चों की ख़ूब हिफ़ाज़त कीजिए, ख़ूब परवरिश कीजिए क्योंकि ये बच्चे ही एक मुल्क को निजात दिलाते हैं। आप कहा करते थे, "अगर आप एक दीनदार बच्चा समाज के हवाले करेंगी तो मुमकिन है कि एक वक़्त में आप देखें कि यही दीनदार और मज़हबी बच्चा एक पूरे समाज को सुधार रहा है।" जहाँ तक नमूने का सवाल है तो तारीख़े इस्लाम में माँओं, बीवियों, बहनों और बेटियों सभी के लिए बेहतरीन नमूना-ए-अमल रसूले इस्लाम[स॰] की बेटी हज़रत फ़ातिमा ज़हरा[स॰] का किरदार है जिन्होंने रसूले इस्लाम[स॰] की बेटी की हैसियत से अगर "उम्मो अबीहा" यानी अपने बाप की माँ का ख़िताब पाया और हज़रत अली[अ॰] की बीवी के तौर पर 'बेहतरीन कुफ़ो' क़रार पाईं तो अपनी आग़ोश में न सिर्फ़ इमाम हसन[अ॰] और इमाम हुसैन[अ॰] को पाला है बल्कि एक ख़ातून की हैसियत से जनाबे ज़ैनब[स॰] और उम्मे कुल्सूम[स॰] जैसी बेटियाँ इस्लाम और इस्लामी समाज को दी हैं जो आपकी परवरिश का शाहकार हैं। ●

आपके मश्वरे और राये हमारे लिए बहुत क़ीमती हैं।
"मरयम" को अच्छे से अच्छा बनाने में आपके मुफ़ीद मश्वरों को हम हमेशा खुले दिल से क़ुबूल करेंगे।

फ़ातिमा ग्राहम

फ़ातिमा ग्राहम 1959 में ब्रिटेन में पैदा हुईं और 16 साल की उम्र में मुसलमान हुईं। फिर दो साल बाद शिया हो गईं। इस वक़्त वह अपने नौ मुस्लिम शिया शौहर इब्राहीम एलन के साथ स्कॉटलैंड में रहती हैं। अभी कुछ दिनों पहले स्टुडेंट्स के एक ग्रुप ने उनसे मुलाक़ात की थी जहां इस ग्रुप के सामने उन्होंने एक स्पीच दी थी। जिसको हम आपके लिए पेश कर रहे हैं।

बिस्मिल्लाहिर रहमानिर रहीम

आज मैं ऐसे दो सब्जेक्ट्स पर बात करना चाहती हूँ जिन पर मैं मुसलमान होने के वक़्त से ही मुकम्मल यक़ीन और पक्का ईमान रखती थी और आज भी उन पर उतना ही पक्का यक़ीन और ईमान रखती हूँ:

1- इस्लाम में सादा और आसान ज़िन्दगी

2- इस्लाम और इन्सान का दिल और रूह

पहले में ख़ुलासे के साथ अपने इस्लाम को क़ुबूल करने के बारे में बताना चाहूँगी।

मैं 16 साल की उम्र में मुसलमान हुई। बचपन में भी तक़रीबन मज़हबी इन्सान थी। मेरे पापा ईसाई थे लेकिन वह मज़हब पर अमल नहीं किया करते थे। उनके उलटे मेरी मम्मी और नानी बहुत ज़्यादा मज़हबी थीं। वह दोनों दीनदार कैथोलिक थीं। मैं कैथोलिक स्कूल गई जहाँ हम हर सबक़ शुरु होने से पहले मुनाजात किया करते थे। मैं बहुत जल्दी ही अलग-अलग सब्जेक्ट्स में रिसर्च और स्टडी करने लगी। मैंने दुनिया के कई मज़हबों और स्कूल ऑफ़ थॉट्स की स्टडी की जिसमें मेरी पूरी कोशिश यही थी कि किसी तरह उस चीज़ को ढूँढ निकालूँ जो मेरी नज़रों में सही थी, जिसके ज़रिए मैं सुकून का एहसास कर सकूँ लेकिन किताबों में तो सिर्फ़ थ्योरीज़ थीं। अभी मैं 16 साल की ही थी कि स्कूल से कालेज चली गई और वहाँ मुझे कई मुसलमान दोस्तों से मिलने का मौक़ा मिला। जो ज़्यादातर एशियाई मुल्कों से आए थे। एक रोज़ दिन के खाने के वक़्त मैं उनके पास चली गई लेकिन वह सब रोज़े से थे। मुझे बड़ी हैरत हुई। उनसे रोज़े के बारे में सवाल पूछने लगी। उन से मैंने उनके अक़ीदों के बारे में भी कई सवाल पूछे जिनके उन्होंने तसल्ली से जवाब भी दिए।

मेरे दोस्तों ने मुझे क़ुरआन का इंग्लिश ट्रांसलेशन दिया। जैसे ही मैंने क़ुरआन को पढ़ना शुरु किया, मेरे दिल और क़ुरआन के दरमियान एक रिश्ता सा क़ायम हो गया। मुझे महसूस होने लगा कि जैसे "मैं अपने घर आ पहुँची हूँ और यही मेरा दीन है।"

मैंने अपना दीन पा लिया था। उस वक़्त के जज़बात को बयान करना बहुत मुश्किल है। कुछ ही दिनों के बाद मैंने अपने बहन-भाईयों में से एक के घर में कलेमा पढ़ लिया। एक आलिमे दीन ने अरबी के कुछ जुमले पढ़े और मैंने वही दोहरा दिए। एक शख़्स ने उनका का इंग्लिश ट्रांस्लेशन पढ़कर सुना दिया। इस तरह मैं मुसलमान हो गई।

मैंने दिल ही दिल में कहा कि कितना आसान और कितना सादा!

इस्लाम मेरे लिए एक मुकम्मल दीन, ख़ालिस दीन और पाक दीन है जिसमें कोई नस्ली या ख़ानदानी फ़र्क़ नहीं दिखता, इसमें

औरत-मर्द सब बराबर हैं, इसमें अद्लो-इन्साफ़ और बराबरी का लिहाज़ रखा जाता है, इसमें समाज के लिए ऐसे क़ानून बनाए गए हैं जो बहुत ही आसान लेकिन पूरी तरह परफ़ैक्ट हैं।

जार्ज बर्नाड शाह ने कभी कहा था, "इस्लाम बेहतरीन दीन है लेकिन मुसलमान इस दीन के बेहतरीन मानने वाले नहीं हैं"।[1]

> इस्लाम मेरे लिए एक मुकम्मल दीन, ख़ालिस दीन और पाक दीन है जिसमें कोई नस्ली या ख़ानदानी फ़र्क़ नहीं पाया जाता। इसमें औरत और मर्द सब बराबर हैं, इसमें अद्लो-इन्साफ़ और बराबरी का लिहाज़ रखा जाता है। इसमें समाज के लिए ऐसे क़ानून बनाए गए हैं जो बहुत ही सादे लेकिन पूरी तरह मुकम्मल हैं।

बहरहाल दो साल की गहरी रिसर्च और एक लम्बी स्टडी के बाद मैंने शिया मज़हब को चुन लिया और ये अपनी जगह एक दूसरी दास्तान है।

अब हम 'इस्लाम में सादगी' वाले सब्जेक्ट की तरफ़ लौटते हैं। इस्लाम शान्ती, इन्साफ़, मेहरबानी और इन्सानियत की हिमायत करता है। 'यूनाइटेड नेशंस डेवलेप्मेंट प्रोग्राम' ने अरब मुल्कों में डेवलेपमेंट प्राजेक्टस के बारे में अपनी रिपोर्ट 2002 में हुकूमतों के सिलसिले में अमीरुलमोमिनीन अली[अ०] के छः क़ौल ज़िक्र किए हैं, मैं यहाँ उन छः में से दो को नक़्ल करना चाहूँगी जिन से ज़ाहिर होता है कि इस्लाम अद्लो इन्साफ़ के बारे में किस तरह के प्रोग्राम रखता है:

1- लोग दो हालतों से ख़ाली नहीं हैं, या तो वह तुम्हारे दीनी भाई हैं या फिर इन्सान हैं बिल्कुल तुम्हारी तरह।"[2]

2- परहेज़गार इन्सान दुनिया में फ़ज़ीलतों के मालिक होते हैं, उनकी बातें सच्ची, उनका लिबास मुनासिब और उनकी चाल इंकेसारी वाली होती है, ये लोग उन चीज़ों से अपनी आँखें बन्द रखते हैं जो अल्लाह ने उन पर हराम कर दी हैं और अपने कानों को अच्छे उलूम और मालूमात के लिए वक़्फ़ कर देते हैं। चाहे तंगदस्ती हो या पैसे की रेल-पेल, दोनों हालतों में उनका हाल एक ही जैसा होता है।[3]

ये उन परफ़ैक्ट और आसान टीचिंग्स में से हैं जिन्होंने मुझे इस्लाम की तरफ़ खींचा था।

मैंने पाँचों इस्लामी फ़िर्क़ों की गहरी स्टडी करने का फ़ैसला किया ताकि ये फैसला कर सकूँ कि कौन सा फ़िर्क़ा ज़्यादा से ज़्यादा लॉजिकल और अक़्ली है। जो चीज़ सबसे ज़्यादा अहम है वह ये है कि इन्सान सही रास्ते और सही राह पर चल पड़े और मेरी अल्लाह से इल्तेजा यही थी कि मुझे सही रास्ते की हिदायत फ़रमाए।

मैंने जाफ़री मज़हब को चुन लिया है और इसके लिए मेरे पास दलीलें भी हैं। मैं ज़ाती तौर पर दूसरों के साथ इस बारे में आसानी से बहस कर सकती हूँ कि मैंने जाफ़री मज़हब क्यों कुबूल किया है और क्यों अहलेबैत[अ०] से मुहब्बत करती हूँ। मगर क्या दूसरे भी ऐसा कर सकते हैं? वह लोग क्या करें जो स्टडी और रिसर्च के लिए ज़्यादा वक़्त नहीं निकाल पाते? कुछ मुसलमान तो ऐसे भी हैं जो दूसरे इस्लामी फ़िर्क़ों से बिल्कुल बेख़बर हैं। उनके पास बस एक ख़ास क़िस्म की मालूमात हैं जो दूसरे मुसलमानों के बिल्कुल उलट है।

एक ऐसे वक़्त जबकि हम मुसलमानों ने अपने बनाए हुए तरीक़ों के तहत इस्लाम की सादगी को पेचीदगी और कम्पलिकेशंस में बदल दिया है, नतीजा यही होगा कि इस्लाम जैसा सादा, आसान और परफ़ैक्ट दीन दुनिया वालों के सामने एक कम्पलिकेटेड और बहुत सख़्त दीन बन कर सामने आएगा। हम सबको रसूल[स०] की ये हदीस हमेशा सामने रखना चाहिए कि लोगों को इस्लाम की तरफ़ ऐसे दावत दो कि वह ख़ुशी-ख़ुशी तुम्हारी तरफ़ आएं, ऐसे नहीं कि उन्हें बेज़ार और अपने से दूर कर दो। कोशिश करो कि इस्लाम के अहकाम उन्हें आसान नज़र आएं, न कि ये अहकाम उन्हें सख़्त और मुश्किल दिखें।

अब दूसरी बात की तरफ़ आते हैं यानी *'इस्लाम और इन्सान का दिल और उसकी रूह'* की तरफ़। कहा जाता है कि हर इन्सान दो दिलों और दो रूहों वाला होता है। एक दिल वह है जो इन्सान के सीने में धड़कता है और दूसरा रूहानी दिल है जिसका कोई अन्दाज़ा और कोई हद नहीं है। चूँकि इन्सान के दिल और रूह में नेकी और बदी दोनों आ सकते हैं इसलिए दिल और रूह की हिफ़ाज़त बहुत ज़रूरी है। दिल

> मेरे दोस्तों ने कुरआन का इंग्लिश ट्रांस्लेशन मुझे दिया। जैसे ही मैंने कुरआन को पढ़ना शुरु किया, मेरे दिल और कुरआन के दरमियान एक रिश्ता सा क़ायम हो गया। मुझे महसूस होने लगा कि "मैं अपने घर आ पहुँची हूँ और यही मेरा दीन है।" मैंने अपना दीन पा लिया था। उस वक़्त के जज़बात को बयान करना बहुत मुश्किल है।

और रूह की हिफ़ाज़त ज़िक्रे ख़ुदा और यादे ख़ुदा के ज़रिए ही हो सकती है। दीन का मानना है कि जो शख़्स अल्लाह को याद करता है उसके दिल पर अल्लाह का नूर छा जाता है

जिससे उसमें शैतान दाख़िल नहीं हो सकता।

इस बात का मतलब ये है कि हम जितना अल्लाह को ज़्यादा याद करेंगे उतना ही हम अपने दिल और रूह की हिफ़ाज़त कर सकेंगे। मैंने इस बात की तरफ़ इशारा इसलिए किया है क्योंकि ये चीज़ें यानी इबादत, ज़िक्र और

> इन्सान के दिल और रूह में नेकी और बदी दोनों की गुन्जाइश है। इसलिए इन दानों की हिफ़ाज़त बहुत ज़रूरी है। दिल और रूह की हिफ़ाज़त ज़िक्र खुदा और यादे खुदा के ज़रिए ही हो सकती है। दीन का मानना है कि जो शख़्स अल्लाह को याद करता है उसके दिल पर अल्लाह का नूर छा जाता है जिससे उसमें शैतान दाख़िल नहीं हो सकता।

दुरूद वग़ैरा सिर्फ़ इस्लाम में ही नहीं पाए जाते बल्कि ये अल्लाह के साथ रिश्ते और ताल्लुक़ को बनाने और इन्सानों के दिल और रूह की हिफ़ाज़त के बेशक़ीमत तरीक़े हैं।

मैं इन चीज़ों में नमाज़ का इज़ाफ़ा करना चाहूँगी क्योंकि नमाज़ खुदा के साथ रिश्ता जोड़ने के लिए एक ख़ास तरीक़ा है और इस रिश्ते की अहमियत कुछ रकअत नमाज़ पढ़ने से कहीं ज़्यादा है। इमाम खुमैनी अपनी किताब "नमाज़ के आदाब" में फ़रमाते हैं, "शरीअत में नमाज़ के लिए कुछ ज़ाहिरी चीज़ें बताई गई हैं जिन पर अमल करना ज़रूरी है लेकिन इसके साथ-साथ नमाज़ की एक रूह भी है जिसकी तरफ़ ध्यान देना भी बहुत ज़रूरी है।

कोई भी समाज या दीन हो, उसे क़ानूनों और अहकाम की ज़रूरत हाती है। इसीलिए इस्लाम भी हमारे लिए क़ानून और अहकाम लेकर आया है। ये अहकाम और आदाब इस्लाम को कंपलीकेटेड बनाने के लिए नहीं भेजे गए हैं बल्कि इसलिए भेजे गए हैं ताकि लोग उन पर आसानी से अमल कर सकें लेकिन अफ़सोस की बात ये है कि ज़्यादातर मुसलमानों की नज़र इन दीनी अहकाम, आदाब, क़ानूनों और शरीअत की रूह और उनकी हक़ीक़त से हट कर उनकी शक्ल और ज़ाहिरी मतलब पर टिक गई है। वैसे सिर्फ़ रूहानी दिल पर ही ध्यान देना और इन अहकाम से ग़फ़लत बरतना भी ग़लत है लेकिन जब इन अहकाम, आदाब और क़ानूनों के ज़ाहिर पर ही हमारा सारा फ़ोकस हो जाता है तो हमें फ़ंडामेंटलिज़्म की बहुत सी अलग-अलग शक्लें नज़र आने लगती हैं।

जो लोग कट्टर पंथी रवैया अपना लेते हैं वह अपनी रूह और दिल के ज़रिए अल्लाह के साथ रिश्ता जोड़ने की सलाहियत खो बैठते हैं।

दीन और ख़ासकर दीने इस्लाम, सिर्फ़ एक ज़ाहिरी ढांचा नहीं है बल्कि इसकी एक अंदरूनी हक़ीक़त भी है।

नज़र तो यूँ आ रहा है कि आज के इस ज़माने में अक्सर मुबल्लेग़ीन, इस्लाम की एक ज़ाहिरी और बाहरी शक्ल लागों को दिखाते हैं, इस दीने खुदा की रूह और ख़ालिस हक़ीक़त की पहचान नहीं कराते। हक़ीक़त ये है कि खुदा के साथ रिश्ते और अल्लाह के हुज़ूर में हाज़िर होने के लिए कुछ ख़ास रास्ते हैं जिन पर चलने के लिए इन्सान को खुदा के अहकाम को मानने वाला, फ़रमांबरदार और उसका मुरीद बनना पड़ता है। क़ुरआन में ऐसी बहुत सी आयतें है जिनका रिलेशन इन्सान के दिल और रूह से है। अगर खुदा चाहे तो कुछ लोगों के दिलों पर ताले डाल देता है और अगर चाहे तो कुछ के दिलों पर लगे ताले खोल देता है। इरशाद होता है, "हम ने उनके दिलों पर पर्दे डाल दिए हैं, ये समझ नहीं सकते और उनके कानों में भी बहरापन है।[4]

बस ये अल्लाह का करम और उसकी रहमत है कि हमारी रूह और हमारे दिल पर पड़े तालों को खोल दिया गया है।

मैं अपनी बात को क़ुरआन की इस आयत पर ख़त्म कर रही हूँ जिसमें अल्लाह तआला ने उन तमाम चीज़ों को समेट दिया है जो मैं यहाँ कहना चाहती थी, "खुदा तुम्हारे बारे में आसानी चाहता है, ज़ेहमत नहीं चाहता"।[5]

1-"Islam is the best religion and Muslims are the worst follower", 2-नहजुल बलाग़ह, ख़त-53 पेज-427, 3-नहजुल बलाग़ह, ख़ुतबए मुत्तक़ीन/185, 4-सूरए अनआम/25, 5-सूरए बक़रा/185

source : www.abna.ir

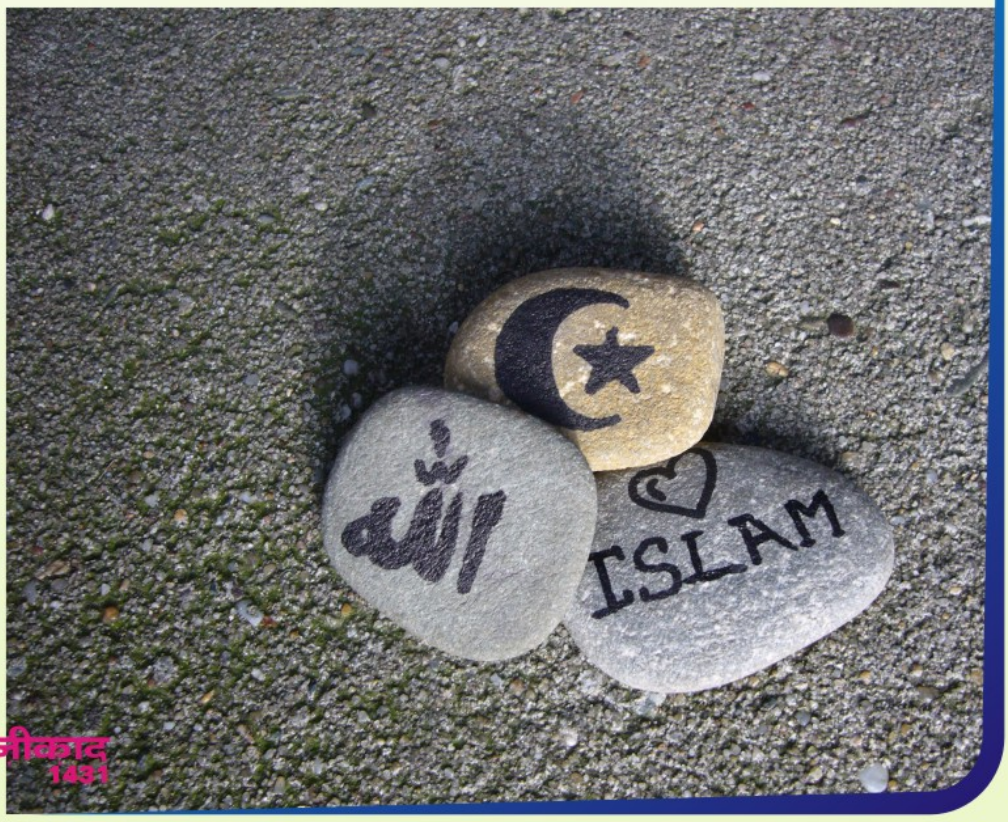

रूहानी बीमारियां

■ आयतुल्लाह इब्राहीम अमीनी

इन्सान के जिस्म की तरह उसकी रूह भी बीमार होती है। आख़िरत की कामयाबी उसी वक़्त मिल सकती है जब इन्सान इस दुनिया से सही-सलामत रूह के साथ जाए। इसीलिए रूह की बीमारियों और सलामती के बारे में जानकारी हासिल करना, इन बीमारियों के सिम्पटम्स और उनसे बचाव के तरीक़ों को जानना हम सब के लिए बहुत ज़रूरी है। लेकिन सवाल ये है कि रूह की बीमारियों की जानकारी और उनसे बचाव के तरीक़े हमें मालूम कैसे हों?

आमतौर पर हम अपनी रूहानी ज़िन्दगी से बेख़बर होते हैं। रूहानी बीमारियों के वजह को अच्छी तरह नहीं जानते और इन बीमारियों के सिम्पटम्स को भी अच्छी तरह नहीं समझ पाते। साथ ही इन मुख़तलिफ़ बीमारियों का इलाज और तोड़ भी नहीं जानते। इसलिए हम सब पैग़म्बरों के मोहताज हैं ताकि वह हमें इन बीमारियों की जानकारी और उनसे बचाव के तरीक़े बता सकें। पैग़म्बर रूहानी बीमारियों को अच्छी तरह जानने वाले और इनका इलाज करने वाले होते हैं। ख़ुदा ने उन्हें ऐसा इल्म दिया है कि वह 'वही' के ज़रिए इन्सानों की गहरी पहचान रखते हैं। ये लोग अल्लाह की तरफ़ ले जाने वाले रास्तों को ख़ूब पहचानते हैं। साथ ही बहकने और गुमराही के फ़ैक्टर्स को भी अच्छी तरह जानते हैं। इसीलिए वह इस सख़्त रास्ते को तय करने में इन्सानों की मदद करते हैं और गुमराहियों से बचाते हैं। पैग़म्बरों ने इन्सानी तारीख़ में इन्सानों की ख़ूब-ख़ूब ख़िदमत की है और उनकी ये ख़िदमात बदन का इलाज करने वाले दुनिया के आम डाक्टरों से लाखों गुना ज़्यादा है। ये पैग़म्बर[अ०] ही थे जिन्होंने इन्सानों को अख़लाक़ी वेल्युज़ और रूहानियत की पहचान कराई है, ख़ुदा के सीधे और सच्चे रास्ते का पता बताया है। ये पैग़म्बर ही थे जिन्होंने इन्सानों को ख़ुदा और ग़ैब की दुनिया का पता बताया है और इन्सान की रूह को पाकीज़ा बनाए रखने में मदद की है। अगर इन्सान में रूहानियत, मुहब्बत, अच्छी अख़लाक़ी क्वालिटीज़ और अच्छी सिफ़तें मौजूद हैं तो ये अल्लाह के भेजे हुए इन्हीं पैग़म्बरों, ख़ास कर हमारे आख़िरी रसूल की अनथक कोशिशों की बरकत से ही है। यक़ीनन पैग़म्बर इन्सानों की रूहानी बीमारियों के इलाज के लिए अल्लाह तआला के भेजे हुए अज़ीम इन्सान और मुआलिज हैं। इसीलिए हदीसों में इनकी पहचान तबीब और मुआलिज के तौर पर कराई गई है। अमीरुलमोमिनीन हज़रत अली[अ०] पैग़म्बर[स०] के बारे में फ़रमाते हैं, "मुहम्मद[स०] चलते फिरते तबीब थे जो हमेशा इन्सानों की रूहानी बीमारियों का इलाज करने में जुटे रहते थे। अन्धी रूह, बहरे कान और गूँगी जुबान को शिफ़ा देते थे। ऐसे इन्सानों का इलाज करते थे जो गुमराही में डूबे होते थे। उन इन्सानों का इलाज करते थे जिनके दिल इल्म और हिक्मत के नूर से ख़ाली होते थे, जिनको इस काएनात की हक़ीक़तों के बारे में कुछ पता ही नहीं था। इसीलिए तो ऐसे इन्सान हैवानों से भी बदतर ज़िन्दगी बसर कर रहे थे।" [1]

ख़ुद क़ुरआन को रूह के लिए शिफ़ा देने वाली दवा बयान किया गया है, "अल्लाह तआला की तरफ़ से मौएज़ा नाज़िल हुआ है और वह क़ल्ब यानी रूह के दर्द के लिए शिफ़ा है।" [2]

एक दूसरी जगह ख़ुदा फ़रमाता है, "क़ुरआन में हम ने कुछ ऐसी चीज़ें नाज़िल की हैं जो मोमिनीन के लिए शिफ़ा और रहमत हैं।" [3]

अमीरुलमोमिनीन[अ०] क़ुरआन के बारे में फ़रमाते हैं "क़ुरआन सीखो क्योंकि ये बेहतरीन कलाम है, इसकी आयतों में ख़ूब ग़ौर-फ़िक्र करो क्योंकि अक़्ल की बारिश रूह को ज़िन्दा करती है और क़ुरआन के नूर से शिफ़ा हासिल करो क्योंकि यह दिलों को यानी रूह को शिफ़ा बख़्शता है।" [4]

एक और जगह फ़रमाते हैं, "जिसके पास क़ुरआन मौजूद हो वह किसी दूसरी चीज़ का मोहताज नहीं होगा और जो शख़्स क़ुरआन से महरूम हो वह कभी ग़नी नहीं होगा। क़ुरआन के ज़रिए अपनी रूह की बीमारियों का इलाज करो और मुसीबतों के वक़्त उस से मदद लो क्योंकि क़ुरआन सबसे बड़ी बीमारी यानी कुफ़्र और निफ़ाक़ से शिफ़ा देता है।" [5]

क़ुरआन में भी आया है कि पैग़म्बरे इस्लाम[स०] रूह का इलाज करने वाले हैं। हमारे दर्द और उसके इलाज को ख़ूब जानते हैं और ऐसी किताब लाए हैं जो हमें हमारे रूहानी दर्द से शिफ़ा और निजात देती है।

रसूले इस्लाम[स०] और हमारे इमामों[अ०] ने बहुत सी रूहानी बीमारियों और उनके इलाज के बारे में हमें बताया है और वह हदीसों में आज भी हमारे पास मौजूद है। इसीलिए अगर हमें अपनी रूह की कामयाबी और सलामती चाहिए है तो हमें क़ुरआन और हदीसों का सहारा लेकर रसूल[स०] और इमामों[अ०] की रहनुमाई में अपनी रूह की बीमारियों को पहचानना चाहिए और उनके इलाज के लिए कोशिश करना चाहिए। ●

औरत - मर्द में बराबरी

अल्लाह पर ईमान, वाजिबात को बजा लाना, हराम से बचना, नमाज़, ज़कात, ख़ुम्स, हज वग़ैरा, वुज़ू-ग़ुस्ल और तयम्मुम, पढ़ने-पढ़ाने, तिजारत, मिलकियत, ख़रीद-फ़रोख़्त, सवाब-अज़ाब...यानी ख़ुदा के अहकाम मर्द-औरत, सब के लिए बराबर हैं। साथ ही इन्सान होने और इन्सानियत में भी मर्द-औरत, दोनों बराबर हैं। इस्लाम का मानना है कि फ़ैमिली के फलने-फूलने और ख़ुशियों का आंगन बनने के लिए, घर में सुकून के लिए घर के अन्दर मुहब्बत, प्यार, उलफ़त और एक दूसरे की आपसी मदद बहुत ज़रूरी है। इस बारे में ख़ुदा फ़रमाता है, "अल्लाह ही ने तुम्हारे लिए तुम्हारे घरों को सुकून की जगह बनाया है।" [1]

औरत में बच्चे की ख़्वाहिश और एक पुरसुकून घर की तलब मर्द से कहीं ज़्यादा होती है। औरत ही है जो घर को घर बनाती है, अपने खिले-खिले चेहरे से घर को जन्नत का दर्जा दे देती है। मर्द का काम घर बनाना है और औरत का काम घर को सजाना। घर की अहमियत इतनी ज़्यादा है कि रसूले अकरम[ﷺ] फ़रमाते हैं, "मस्जिद की तरफ़ जाना, फिर घर की तरफ़ वापस आना, दोनों सवाब में बराबर हैं।" [2]

हमारा दीन हर वक़्त सिर्फ़ इबादत करते रहने को बिल्कुल पसन्द नहीं करता है। इस्लाम मस्जिद और घर दोनों में बैलेंस का क़ायल है। यहां तक कि किसी नबी के लिए भी अहम तरीन नेमत उसकी बीवी और औलाद है। इरशादे रब्बुल इज़्ज़त है, "हम ने आपसे पहले भी बहुत से रसूल भेजे हैं और उनके लिए बीवियां और औलाद क़रार दी है।" [3]

अल्लाह ने अपनी तालीमात का तज़किरा करते हुए औलाद की निस्बत बीवियों की तरफ़ देकर औरत की अहमियत को साफ़ कर दिया है। दूसरी जगह ख़ुदा फ़रमाता है, "अल्लाह ने तुम्हीं में से तुम्हारा जोड़ा बनाया है। फिर उस जोड़े से औलाद और उनकी औलाद क़रार दी है और सब को पाकीज़ा रिज़्क़ दिया है तो क्या ये लोग बातिल पर ईमान रखते हैं और अल्लाह ही की नेमतों से इंकार करते है?" [4]

औलाद की निस्बत औरतों की तरफ़ यानी बीवियों की तरफ़ दी गई है क्योंकि खजूरें खाने वाला खजूरें खाकर उसकी गुठली फेंक देता है लेकिन उसी से खजूर पैदा होती है और ज़मीन के मालिक की मिलकियत बन जाती है। एक क़तरे को 9 महीने अपने पेट में रखना, उसे अपना ख़ून देना, अपनी एनर्जी देना, ये सब औरत का काम है। मर्द तो लज़्ज़त के बाद अपने आपको फ़ारिग़ समझ लेता है। बीवियों की निस्बत मर्द की तरफ़ कि वह तुम्हारे ही जैसी हैं, समानता और सिमिलॅरिटी की बेहतरीन मिसाल है और फिर औलाद की निस्बत बीवी की तरफ़ देने से मुराद ये है कि ख़ुदा इन्सान को एहसास दिलाना चाहता है कि जन्नत माँ के क़दमों ही में मिलेगी। घर अल्लाह का बनाया हुआ एक ऐसा गुलशन है जिसमें मुहब्बत, उलफ़त और प्यार का दौर-दौरा घर को जन्नत और समाज को मिसाली बना देता है। घर मर्द बनाता है लेकिन उसको जन्नत औरत बनाती है। मर्द का काम हिफ़ाज़त करना है लेकिन उस घर में ख़ूबसूरती पैदा करना औरत का करिशमा है। औरत-मर्द एक दूसरे का लिबास, एक दूसरे की इज़्ज़त और एक दूसरे के साथी हैं। "कुल्लुकुम राइन व कुल्लुकुम मस्ऊल अन रईयतिही" यानी तुम मर्द उनके मुहाफ़िज़ हो, तुम से उनके बारे में सवाल

किया जाएगा। क़ुरआन फ़रमा रहा है, ''ईमान वालो! अपने नफ़्स और अपने घर वालों को उस आग से बचाओ जिसका ईंधन इन्सान और पत्थर होंगे, जिस पर वह फ़रिश्ते बैठे होंगे जो सख़्त मिज़ाज और तुंदो-तेज़ हैं और ख़ुदा के हुक्म की मुख़ालेफ़त नहीं करते हैं और जो हुक्म दिया जाता है उसी पर अमल करते हैं।'' (5)

हदीस में है कि उस मर्द पर ख़ुदा की रहमत नाज़िल होती है जो नमाज़े शब के लिए उठता होता है और अपनी बीवी को भी उठाता है ताकि वह भी नमाज़े शब पढ़ सके। ख़ुदा उस औरत पर रहम करता है जो नमाज़े शब के लिए ख़ुद भी उठती हो और शौहर को भी उठाती हो ताकि वह भी नमाज़े शब पढ़ सके।

इन सब बातों से ये हक़ीक़त सामने आती है कि औरत-मर्द का आपसी रिश्ता इतना मज़बूत है कि मर्द चाहता है कि औरत भी उसकी नेकी में उसकी साथी बने। उधर औरत की भी ख़्वाहिश होती है कि मर्द भी नेकी में उसका साथ दे ताकि पूरी फ़ैमिली के लिए जन्नत के रास्ते खुल जाएं। ख़ुदा फ़रमा रहा है, ''जो लोग ईमान लाए और उनकी औलाद ने भी ईमान में उनकी पैरवी की तो हम उनकी ज़ुर्रियत को भी उन्हीं से मिला देंगे और किसी के अमल में से ज़रा सा भी कम नहीं करेंगे कि हर शख़्स अपने अमल का गिरवी है।'' (6) इसी तरह हज़रत नूह[अ०] की दुआ जिसमें घर की अहमियत और औरत-मर्द के लिए मग़फ़िरत की ख़्वाहिश है, ''परवरदिगार! मुझे और मेरे वालेदैन को और जो ईमान के साथ मेरे घर में दाख़िल हो जाए और तमाम मोमेनीन और मोमेनात को बख़्श दे और ज़ालिमों के लिए हलाकत के अलावा किसी चीज़ में इज़ाफ़ा न करना।'' (7)

1-सूरए नहल/80, 2-अल-ख़ुल्क़ुल कामिल, जिल्द-2 पेज-183, 3-सूरए राद/38, 4-सूरए नहल/72, 5-सूरए तहरीम/6, 6-सूरए तूर/21, 7-सूरए नूह/28

फ़ैमिली में औरत की हैसियत

■ आयतुल्लाह ख़ामेनई

पैग़म्बरे अकरम[स०] से किसी ने पूछा, ''मैं किसके साथ नेकी करूँ?''

आपने फ़रमाया, ''अपनी माँ के साथ।''

आप[स०] ने उसके दोबारा यही सवाल करने पर भी यही फ़रमाया और तीसरी बार पूछने पर भी यही जवाब दिया लेकिन चौथी बार जब उसने फिर यही सवाल किया तो आपने फ़रमायाः

''अपने बाप के साथ नेकी करो।''

इससे ये बात साबित होती है कि एक फ़ैमिली में औरत की हैसियत और मुक़ाम बहुत ज़्यादा हैं। लेकिन यह इस वजह से नहीं हैं कि ख़ुदा एक तबक़े को दूसरे से ज़्यादा अहम बनाकर पेश करना चाहता है बल्कि ऐसा इसलिए है क्योंकि औरतें ज़्यादा ज़हमतें उठाती हैं।

यह भी ख़ुदावन्दे आलम का इन्साफ़ है कि औरतें ज़्यादा तकलीफ़ें उठाती हैं तो उनका हक़ भी ज़्यादा है और औरतें ज़्यादा मुश्किलों का सामना करती हैं इसलिए उनकी अहमियत भी ज़्यादा है, यह सब ख़ुदा के इन्साफ़ की वजह से है। इस्लाम की नज़र में घर के ख़र्चों को चलाने और दूसरी तरफ़ ख़ुद घर को चलाने की ज़िम्मेदारी, दोनों बराबर हैं। इस्लामी क़ानून ने इस बारे में इतनी सी भी इजाज़त नहीं दी है कि मर्द या औरत पर रत्ती बराबर भी ज़ुल्म हो। इस्लाम ने मर्द और औरत दोनों का हक़ अलग-अलग बता दिया है। उसने एक पड़ले में मर्द और एक में औरत के वज़न को रखा है। अगर इन चीज़ों में पढ़े-लिखे और समझदार लोग ग़ौर करें तो वह हक़ीक़त को ख़ुद ही समझ जाएंगे। यह वह चीज़ें हैं, जिन्हें किताबों में भी लिखा गया है। आज हमारी पढ़ी-लिखी औरतें, अलहम्दुलिल्लाह इन सब मसलों को दूसरों से और ख़ुद मर्दों से कहीं अच्छे तरीक़े से जानती हैं......... और उनकी तबलीग़ भी करती हैं।

घरेलू ज़िन्दगी में अफ़रा-तफ़री

■ मुजतबा मूसवी लारी

घरेलू ज़िन्दगी से ही बड़े-बड़े समाजों की बुनियाद पड़ती है। यहीं प्यार और मुहब्बत की सबसे ज़्यादा ज़रूरत होती है। इन्सानी ज़िन्दगी के अलग-अलग दौर यहीं से शुरु होकर यहीं पर ख़त्म हो जाते हैं। जब घर का माहौल ख़ुशियों से भरा और आराम वाला होता है तो घर वालों की ज़िन्दगी पर ख़ुलूस, सुकून और इत्मिनान का साया रहता है यानी फ़ैमिली में रूहानी और अख़लाक़ी वैल्युज़ जितनी ज़्यादा होंगी उतनी ही वह फ़ैमिली फलती-फूलती रहेगी।

पश्चिमी क़ौमें इंडस्ट्रियल रेवयुलूशन से पहले बहुत ही सादा ज़िन्दगी बसर करती थीं। इसलिए उनका फ़ैमिली माहौल भी ख़ासा आराम और सुकून देने वाला था। मर्द ज़िन्दगी की गाड़ी खींचने के लिए घर से बाहर चले जाते थे और औरतें बच्चों की परवरिश में लग जाती थीं। घर के बाहर के कामों से उनका कोई रिश्ता नहीं होता था।

इंडस्ट्रियल रेवयुलूशन का पहला असर ये हुआ कि उसने औरत-मर्द, छोटे-बड़े, सभी को इंडस्ट्रियल सेंटर्स, हुकूमती इदारों और बिज़िनेस सेंटर्स की तरफ़ खींच लिया और पूरी तरह से शहरी ज़िन्दगी का रुख़ बदल कर अच्छी से अच्छी ज़िन्दगी की तलाश में सबको रवाँ-दवाँ कर दिया।

इस बदलाव का रिज़ल्ट ये हुआ कि फ़ैमिली में आपसी मेल-मुहब्बत ख़त्म हो गई, औरत का ध्यान जो सिर्फ़ फ़ैमिली के माहौल तक महदूद थी और जिसका इश्क़ सिर्फ़ अपने शौहर और बच्चों के लिए था वह नापैद हो गया, वह औरतें जो अब तक बच्चों की परवरिश तक अपने को समेटे हुए थीं, अब इस बंधन को अपने लिए मुसीबत समझने लगीं, अब तो उनसे घरदारी और बच्चों की परवरिश की उम्मीद भी नहीं की जा सकती।

अब क्योंकि ज़्यादातर औरतें ख़ुद कमाने लगीं इसलिए अपनी एक्टिविटीज़ को सिर्फ़ घर तक नहीं रख सकतीं हैं। अब औरतों के दो काम हो गए है।

(1) इंडस्ट्रियल सेंटर्स और इदारों में काम करना

(2) माँ और औरत की हैसियत से घरेलू कामों की देखभाल करना।

इसलिए औरतों के पास घर की देखभाल के लिए वक़्त नहीं बचता। ज़ाहिर है कि जिस औरत का ध्यान अलग-अलग कामों में बंटा हुआ हो, जिसको ठीक वक़्त पर आफ़िस पहुँचना हो वह घरेलू कामों को करने में अपनी मसरूफ़ियत और थकन की वजह से दिलचस्पी ले ही नहीं सकती।

दूसरी तरफ़ औरतों की आज़ादी के नारे ने भी अपना मनहूस साया समाज के ऊपर डाला। पाकीज़गी और पाकदामनी का तसव्वुर बहुत से घरानों से इस तरह ख़त्म हो गया जैसे गधे के सर से सींग। अब सिवाए बदबख़्ती और परेशानी के ये आज़ादी कोई नतीजा नहीं दे सकती। इसी तरह दीनी बुनियाद पर बनाए गए अख़लाक़ी उसूल, ख़ानदानी और समाजी सिस्टम का भी धीरे-धीरे ख़ात्मा हो गया।

आज के माडर्न और डेवलप्ड मुल्कों में तलाक़ की ज़्यादती समाज का एक बहुत बड़ा मसला बन चुकी है और उसने उन लोगों को ऐसी जगह पहुंचा दिया है जहां से वापसी नामुमकिन है।

अब हालत ये है कि मर्द-औरत के सलीक़े और अंदाज़ में मामूली सा फ़र्क़ भी घरेलू झगड़ों की वजह बन जाता है और दोनों के दरमियान कशमकश और इख़्तेलाफ़ की लम्बी दीवार खड़ी हो जाती है जिससे कभी ख़त्म न होने वाले दूसरे बहुत से झगड़े और मसले शुरु हो जाते हैं। ये तो ज़ाहिर सी बात है कि दुनिया दारी के मनहुस बादल जब शादीशुदा ज़िन्दगी के आसमान पर छा जाते हैं तो एक न एक दिन धीरे-धीरे आपसी

मुहब्बत भी ख़त्म हो जाती है।

बहुत सी तलाक़ों की बुनियादी वजह वह मसले होते हैं जिनका हल बहुत आसानी से निकाला जा सकता था। कुछ दिनों अगर ये तलाक़ न होती तो फ़िदाकारी की दीवार में पड़ी हुई दरार बहुत जल्द ख़त्म हो जाती और इख़्तेलाफ़ की आग बुझ जाती। साथ ही दोनों तरफ़ से होने वाली चश्म पोशी फिर से शादीशुदा ज़िन्दगी को मज़बूत और ख़ुशहाल बना देती।

मेरे एक दोस्त ने बताया, "जर्मनी में जितने दिन मैं रहा, इतने दिनों में मैंने देखा कि मेरा कोई पड़ोसी ऐसा बाक़ी नहीं रहा जिसने अपनी बीवी को तलाक़ न दे दी हो।"

एक ज़माने से तलाक़ की रोक-थाम के लिए बहुत से ऐसे सेंटर्स ईस्ट जर्मनी में खोले जा चुके हैं जिनका काम सिर्फ़ शादीशुदा ज़िन्दगी में सुधार है। बहुत से डाक्टर, साइकालोजिस्टस, साइकेट्रट्स और समाज सुधारक भी इस तरफ़ मुतवज्जेह हो चुके हैं, किताबों और लिट्रेचर के अलावा ख़ास वालंटियर दस्ते भी इस काम के लिए कोशिश कर रहे हैं। मज़े की बात तो ये है कि अब बहुत से लोग इस बात को समझने लगे हैं कि तलाक़ की बुनियादी वजह औरतों का घर से बाहर काम करना है।

घरेलू आमदनी की क़िल्लत की वजह से 70% शादी शुदा औरतें घर से बाहर काम करने पर मजबूर हैं। उनमें 60% तो बाल-बच्चों वाली हैं। घर से बाहर नौकरी करना और घर के अन्दर घरेलू कामों और बच्चों की परवरिश करना औरतों को इतना तोड़ देता है कि शौहर-बीवी के बीच झगड़े शुरू हो जाते हैं और इसका नतीजा तलाक़ की सूरत में ज़ाहिर होता है।

मशहूर रूसी नाविलिस्ट टालस्टॉय कहते हैं, "तलाक़ की ज़्यादती की वजह औरतों को तलाक़ में ज़रूरत से ज़्यादा हक़ देना, उनके मिज़ाज में जल्दी-जल्दी उतार-चढ़ाव और उनका किसी छोटी सी बात पर भी जल्दी से परेशान हो उठना है। इसके अलावा दूसरे और भी फ़ैक्टर्स हैं जैसे औरतों और मर्दों का मशीन की तरह काम करके बिल्कुल थक जाना, औरतों और मर्दों का ज़रूरत से ज़्यादा एक दूसरे के साथ मेल-जोल जिससे ग़ैर-अख़लाक़ी ताल्लुक़ात और रिश्ते पनपते हैं जिसकी वजह से तलाक़ की नौबत आ जाती है और फ़ैमिलीज़ के दरमियान नफ़रतें भी पैदा हो जाती हैं। इसी तरह औरतों का घर से बाहर जाकर जॉब करना भी एक अहम फ़ैक्टर है।"

कुछ साल पहले न्युयार्क का एक क्लब जो न्युयार्क और वाशिंगटन के निकाह और तलाक़ों का हिसाब-किताब रखा करता था, उसका सर्वे

हुस्न और सेहत के लिए कुदरत का तोहफ़ा

नारियल

सदियों से साहिली इलाक़ों के रहने वाले नारियल और उसके तेल से ख़ूब-ख़ूब फ़ायदे उठा रहे हैं। नारियल अच्छी सेहत का एक अहम ज़रिया है। ये दवा और ग़िज़ा दोनों ही के लिए इस्तेमाल किया जाता है। इसका सख़्त छिलका, उसके अन्दर का गूदा, पानी और तेल सब कुछ फ़ायदेमन्द है। नारियल का पानी ड्रॉप के तौर पर भी पिया जाता है। ये ख़ून में शामिल होकर कैलशियम की कमी को दूर करके हड्डियों के दर्द को ख़त्म करता है। नारियल में विटामिन के, ई, मिन्रेल्स और आयरन की अच्छी ख़ासी मिक़दार पाई जाती है।

बालों की देख-रेख

नारियल का तेल क़ुदरत का अनमोल ख़ज़ाना है। ये बालों को घना और चमकदार बनाता है। इसके लगातार इस्तेमाल से बालों की ख़ुश्की दूर होती है और जुएं नहीं होतीं। ये रूखे और बेजान बालों के लिए बेहतरीन कंडीशनर है और बालों को ज़रूरी प्रोटीन भी फ़राहम करता है।

जिल्द पर मॅसाज करने के लिए नारियल का तेल बेहतरीन टॉनिक है। सूखी और ख़ुश्क स्किन का बेहतरीन इलाज है। ये झुर्रियों और स्किन के इंफेक्शन ख़ासकर 'एग्ज़िमा' को दूर करता है। नारियल के तेल की हल्की मालिश जिल्द की ख़ारिश को कम कर देती है। नारियल के तेल में ऐसी ख़ासियतें पाई जाती हैं जो वक़्त से पहले पड़ने वाली झुर्रियों को रोकने और दूर करने के लिए बहुत अहम हैं। रोज़ाना न सही हफ़्ते में एक दो बार इसके कुछ ड्रॉप्स चेहरे पर लगाकर आहिस्ता-आहिस्ता मसाज करने से चेहरे की ख़ुश्की भी दूर हो जाती है।

इसका तेल थॉयराएड के फंक्शन को तेज़ करता है, हाज़मा बढ़ाता है और वज़न को भी कन्ट्रोल करता है। इसीलिए साहिली इलाक़ों के बाशिन्दे जो रोज़ाना अपनी ग़िज़ा में नारियल का इस्तेमाल करते हैं वह ज़्यादा वज़न का शिकार नहीं होते बल्कि चुस्त, फुर्तीले, एक्टिव और स्मार्ट होते हैं।

नारियल का तेल ख़ून में मिलकर बदन को ताक़त देता है। इस तरह ये हाज़मे के दबाव को कम करके जिगर की बीमारियों से बचाव का बड़ा अच्छा रास्ता है। साथ ही इसका तेल गुर्दे की पथरी को घुलने में भी मदद देता है। ख़ून में शूगर की मिक़दार को कंट्रोल करता है जिससे ये शुगर के मरीज़ों के लिए भी फ़ायदेमन्द है। ऐसे मरीज़ रोज़ाना सुबह या रात को एक चम्मच नारियल का तेल पी लिया करें।

जली हुई स्किन के लिए

नारियल का तेल जिस्म के जले हुए हिस्से पर लगाने से न सिर्फ़ वह हिस्सा तेज़ी से ठीक होने लगता है बल्कि ये एक प्रोटेक्टिव लेयर बना देता है जो बाहरी मिट्टी, हवा, फंगस, बैक्टीरिया और वायरस से रोकती है। इसलिए इसको ऐजंट हीलिंग के तौर पर काम में लाया जा सकता है।

हड्डियों के लिए

नारियल के तेल की एक ख़ुसूसियत मिंरेल्स को जिस्म में जज़्ब करना है जैसे कैलशियम और मैगनीशियम जो हमारी हड्डियों के लिए बहुत जरूरी हैं।

दाँतों के लिए

दाँतों की सेहत के लिए कैलशियम बहुत ज़रूरी है। नारियल के तेल से हम ज़्यादा से ज़्यादा कैलशियम जिस्म में एबज़ार्ब कर सकते हैं। ये दाँतों को मज़बूत करके उनको ख़राब होने से बचाता है। नारियल के तेल की इसके अलावा भी और बहुत सी ख़ूबियाँ हैं जो सेहत और ज़िन्दगी में बैलेंस बना कर हमें बीमारियों से प्रोटेक्शन देती हैं।

देखकर वहाँ के ज़िम्मेदारों को इस बात का एहसास हुआ कि इन दोनों शहरों में बहुत बड़ी तादाद में पाए जाने वाले फ़नकार और एक्टर्स के तबक़े में पचास साल के अन्दर जितनी तलाक़ें हुई हैं उतनी किसी और तबक़े में नहीं हुईं। इस सूरते हाल को देखकर क्लब के ज़िम्मेदारों ने सोचा कि हॉलीवुड के निकाह और तलाक़ों पर भी नज़र डाली जाए लेकिन इस शहर की तलाक़ों की तादाद इतनी ज़्यादा थी कि वह लोग इसको चाह कर भी पब्लिश नहीं कर सके।

ब्रिटेन में इधर जो आंकड़े पब्लिक के सामने पेश किए गए हैं उनमें ये ख़बर भी थी कि पिछले साल ब्रिटेन में तलाक़ की ज़्यादती ने वर्ल्ड रिकार्ड तोड़ दिया था। कुछ तलाक़ें ख़यानत की वजह से हुई थीं और कुछ दूसरी वजहों की बिना पर।

एक राइटर अमेरिका में होने वाली तलाक़ की ज़्यादती का ज़िक्र करते हुए लिखता है, "अमेरिका में 1881 से 1890 तक यानी दस साल के अन्दर जो तलाक़ें हुईं उनके मुक़ाबले में 1940 से 1949 तक दस गुना ज़्यादा तलाक़ें हुईं। अन्दाज़े से ये बात कही जा सकती है कि हर चार शादियों में से एक का अन्जाम तलाक़ पर हुआ।"

कैलिफ़ोर्निया में 1956 में 87452 निकाह हुए और 42471 तलाक़ हुईं यानी हर दो निकाहों पर एक तलाक़ हुई।

अमेरिकन मैगज़ीन "वेक" में एक बार छपा था, "स्वीडन में आख़िरी दस सालों के अन्दर दस फ़ीसद और आख़िरी पचास सालों के अन्दर ये परसेन्टेज बहुत बढ़ गया है।

फ्रांस की अदालतों ने 1890 में 9785 तलाक़ों का हुक्म दिया जिसमें से 700 तलाक़ों का मुतालबा औरतों की तरफ़ से था और अब ये रेश्यो कहीं ज़्यादा हो चुका है।

फ़र्स्ट वर्ल्ड वार और ख़ास कर दूसरी वर्ल्ड वार के बाद शादियों की तादाद में जो कमी हुई है उसकी वजह वह ग़ैर-अख़लाक़ी बातें है जो जवानों में आम हो चुकी हैं, यही अख़लाक़ी बुराईयां लोगों को लाउबाली और गुमराह बना रही हैं और बेहयाई की तरफ़ खींचने के साथ-साथ तलाक़ों में ज़्यादती की वजह भी बनी हैं।

GDPIS अलग-अलग सालों में तलाक़शुदा औरतों की तादाद का मुक़ाबला करते हुए लिखता है कि तलाक़शुदा औरतों की दोबारा शादियों में काफ़ी इज़ाफ़ा हुआ है। इसके बाद कहता है तलाक़शुदा औरतों की शादियाँ पहली शादी करने वालों की तादाद से ज़्यादा होने की वजह 1914 से 1918 की जंग के बाद तलाक़ों में ज़्यादती है।

पिछले साल[1] फ्रांस में तीस हज़ार तलाक़ें हुईं और क्योंकि हर साल इस तादाद में इज़ाफ़ा ही हो रहा है इसलिए फ्रांस के फ़ैमिली फ़ेडरेशन ने एक आवाज़ होकर हुकूमत से दरख़्वास्त की है कि 1941 का ख़ास क़ानून जो 1945 में ख़त्म कर दिया गया था उसको फिर से लागू किया जाए। इस क़ानून के मुताबिक़ शादी से तीन साल तक किसी भी तरह से तलाक़ देना मना है।

दो फ़र्क़ों के साथ ऐसा ही ब्रिटेन में भी हो रहा है: (1) मर्द की तरफ़ से सख़्ती और वहशीपन का इज़हार (2) औरत की तरफ़ से ख़यानत और बेइन्तेहा बेहयाई और आज़ादी का इज़हार।

आमतौर पर अमेरिकी औरतें दो महीनों या आठ महीनों या ज़्यादा से ज़्यादा 26 महीनों में शौहरों से अलग हो जाती हैं और हर साल डेढ़ लाख बच्चे तलाक़ों पर क़ुर्बान हो जाते हैं। एक दूसरे हिसाब के मुताबिक़ आज भी अमेरिका में तीस लाख बच्चे ऐसे मौजूद हैं जिनके माँ-बाप मुख़तलिफ़ अलग-अलग फ़ैक्टर्स की बिना पर एक दूसरे से अलग हो चुके हैं।

अमेरिका के मशहूर कॉलमिस्ट लेवसन अमेरिका में तलाक़ों के बढ़ते हुए आंकड़ों को बयान करते हुए लिखते हैं, "जिसमें ज़र्रा बराबर भी इन्सानियत होगी वह इन ख़तरनाक आंकड़ों से परेशान हो जाएगा और इसके इलाज की फ़िक्र में लग जाएगा।"

सबसे ज़्यादा जो चीज़ ग़ौर करने के लायक़ है वह ये है कि 80 फ़ीसद तलाक़ की माँग औरत की तरफ़ से होती है। तलाक़ों के बढ़ने की वजह भी इसी जगह तलाश करना चाहिए और आख़िरकार इस सिलसिले को ख़त्म करना चाहिए।

तलाक़ और शादी के दफ़्तर से हासिल होने वाली इंर्फ़ामेशन जो अख़बारों ने छापी है वह ये है कि तलाक़ बहुत तेज़ी से बढ़ रही है जो कि एक बड़े ख़तरे की घंटी है जिससे आंखें नहीं चुराई जा सकतीं। यक़ीनन ये बात कही जा सकती है कि अगर हालात ऐसे ही रहे तो बदकारियों और बुराईयों के असर और 'वेस्टर्न सिविलाइज़्ड कल्चर' की पैरवी से हमारे यहां भी तलाक़ों की तादाद बढ़ जाएगी और बहुत सी फ़ैमिलीज़ बर्बाद हो जाएंगी। हाँ, अगर समाज फिर से दीन का पाबन्द हो जाए तो ये ख़राबियाँ ख़त्म हो सकती हैं।

(1) ये अब से तक़रीबन 30 साल पहले की बात है, इससे अंदाज़ा हो सकता है कि अब जर्मनी में तलाक़ें कहां पहुंच चुकी होंगी और वहां शादी शुदा जिन्दगियों की क्या हालत हो चुकी होगी।

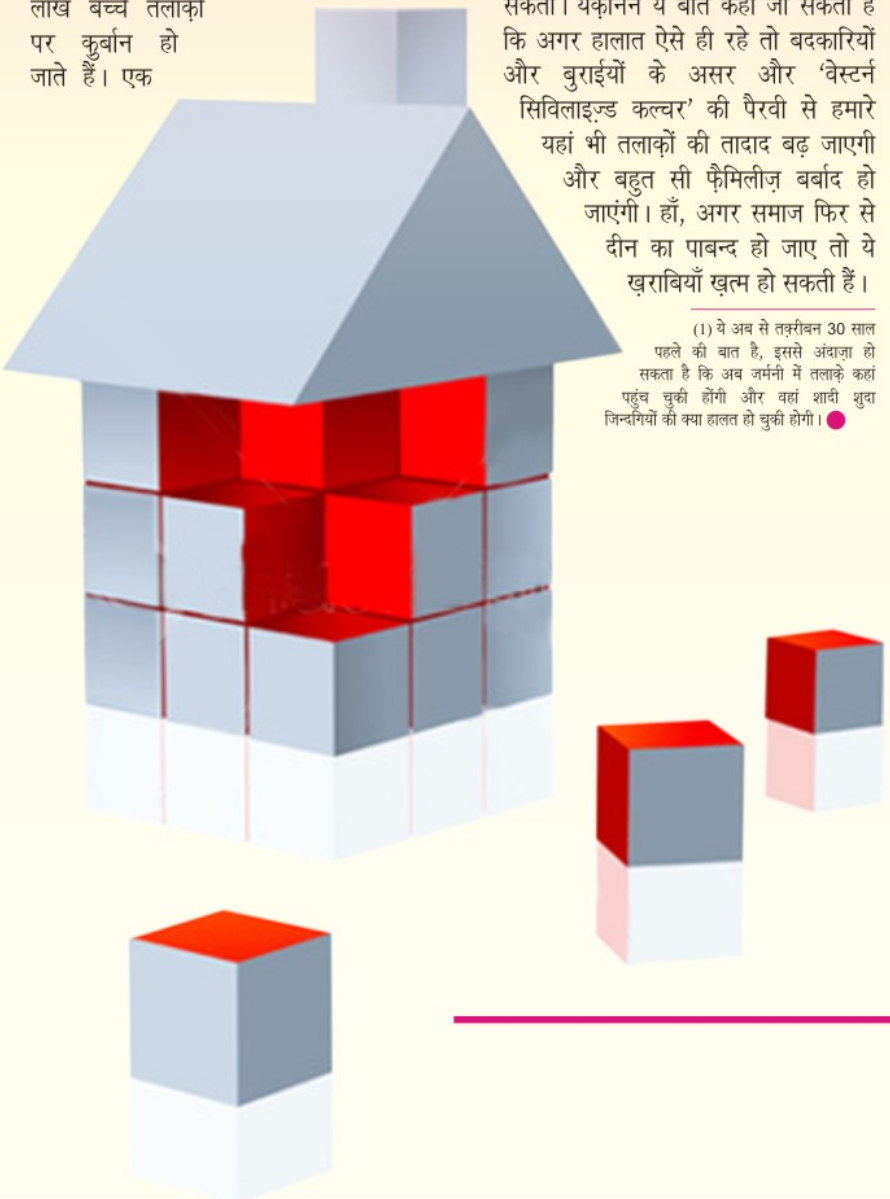

बीवी के हक़ शौहर पर

■ दाऊद हुसैनी

शादी के बाद घरेलू ज़िन्दगी में मियाँ-बीवी के कुछ आपसी हक़ होते हैं। कुछ हक़ बीवी पर शौहर के हैं जिनको अदा करना बीवी पर वाजिब है और कुछ हक़ शौहर पर बीवी के होते हैं जिनको पूरा करना शौहर पर वाजिब है। वह हक़ जो शौहर पर बीवी के हैं वह इस तरह से हैं:-

(1) बीवी की ज़रूरतें पूरी करना

रोटी, कपड़े और मकान से लेकर औरत की उन सारी ज़रूरतों को नफ़्क़ा कहते हैं जो उसे रोज़ाना की ज़िन्दगी में पेश आती हैं। यहां तक कि उसके स्टेटस के मुताबिक़ उसके लिए ज़ेवर और ज़ीनत वग़ैरा का इन्तिज़ाम करना भी शौहर पर वाजिब है। सिर्फ़ यही नहीं बल्कि अगर किसी वजह से उसे नौकरानी की ज़रूरत पड़ जाए तो उसके स्टेटस के मुताबिक़ नौकरानी का इन्तिज़ाम भी करना शौहर की ही ज़िम्मेदारी है।

ख़ुदा इस बात से भी बहुत ख़ुश होता है जब कोई शौहर वाजिब और ज़रूरी हक़ों से हटकर अपनी बीवी के लिए आम ज़िन्दगी की उन सारी चीज़ों का इन्तिज़ाम भी करे जो उसे आराम पहुँचा सकें और ख़ुश रख सकें।

इमाम सज्जाद[अ०] फ़रमाते हैं, "ख़ुदा की नज़र में सब से महबूब वह बन्दा है जो अपने घर वालों के लिए उन सारी चीज़ों का इन्तिज़ाम करे जो उन्हें ख़ुश रख सकें।" [1]

(2) बीवी का एहतेराम

शौहर की ये भी ज़िम्मेदारी है कि वह अपनी बीवी के साथ अच्छा सुलूक करे और उसका एहतेराम करे। रसूले अकरम[स०] की एक हदीस में आया है, "जिस औरत से शादी करो उसका एहतेराम भी करो।" [2]

(3) मुहब्बत का इज़हार

बीवी के एहसासात और जज़बात का ख़्याल रखना, औरत की ज़रूरत और मर्द का फ़र्ज़ है। इसलिए हर मर्द को इस बात का ख़ास ख़्याल रखना चाहिए क्योंकि इससे औरत अपने घर में सुकून महसूस करती है। रसूले अकरम[स०] फ़रमाते हैं, "मर्द का अपनी बीवी से ये कहना कि 'मैं तुम से मुहब्बत करता हूँ' औरत कभी नहीं भुलती है।" [3]

(4) इंसाफ़ की रिआयत

मर्द पर ज़रूरी है कि वह अपनी बीवी के साथ इंसाफ़ का ख़्याल रखते हुए उसके हर जायज़ हक़ को पूरा करे और उसका कोई हक़ पामाल न होने दे। रसूले ख़ुदा[स०] फ़रमाते हैं, "मलऊन है, मलऊन है वह आदमी जो अपने घर वालों के हक़ों को पूरा न करे।" [4]

(5) शौहर का पाक-साफ़ रहना

शौहर की ये भी ज़िम्मेदारी है कि ख़ुद को पाक-साफ़ रखे क्योंकि गन्दगी एक तरफ़ तो औरत पर ज़ुल्म है और दूसरी तरफ़ इससे औरत की पाकदामनी को भी ख़तरा है। इमाम रज़ा[अ०] फ़रमाते हैं, "मर्द का ख़ुद को पाक-साफ़ रखना औरत की पाकदामनी और पाकीज़गी को बाक़ी रखता है।" [5]

हसन बिन जहम इमाम काज़िम[अ०] के सहाबी थे। एक बार उन्होंने देखा कि इमाम[अ०] अपनी डाढ़ी में मेंहदी लगाए हुए हैं। उन्होंने ताज्जुब से पूछा, "आप मेंहदी लगाए हुए हैं?!" इमाम ने फ़रमाया, "मर्द का ख़ुद को आरास्ता रखना, औरत की पाकदामनी और पाकीज़गी की हिफ़ाज़त करता है क्योंकि औरत अपने आरास्ता शौहर को देखने के बाद दूसरों की तरफ़ नज़र नहीं उठाती। हो सकता है कि अगर मर्द अपनी सफ़ाई पर ध्यान न दे तो औरत की पाकदामनी पर दाग़ लग जाए। और क्या तुम को ये पसंद है कि तुम्हारी बीवी गंदी-संदी रहे?"

हसन बिन जहम ने कहा, "नहीं!"

तो इमाम ने फ़रमाया, "बस यूँ ही तुम्हारी बीवी को भी तुम्हारा गंदा रहना पसंद नहीं है। पाक-साफ़ रहना, ख़ुशबू लगाना और बाल छोटे रखना पैग़म्बरों के अख़लाक़ में से है।" [6]

इसलिए शौहर को अपनी बीवी के सामने हमेशा साफ़-सुथरा और आरास्ता रहना चाहिए ताकि बीवी के दिल में उसकी मुहब्बत यूँ ही बाक़ी रहे, ख़ास कर आज के इस ज़माने में जब गुमराहियों के रास्ते हर तरफ़ खुले हुए हैं और उधर शैतान भी क़दम-क़दम पर ताक लगाए बैठा है।

1-वसाएल, 5/132, 2-मकारिमे अख़लाक़, 3-वसाएल, 14/10, 4-वसाएल, 3/22, 5-वसाएल, 14/183, 6-वसाएल, 14/183

इमाम रज़ा अ०

इमाम अली रज़ा अ० की विलादत 11 ज़ीक़ाद 148 हि० को मदीने में हुई थी। आपके वालिद हज़रत इमाम मूसा काज़िम अ० हैं और वालिदा ताहिरा के नाम से मशहूर हैं। आपका नाम अली, कुन्नियत अबुल हसन और लक़ब, रज़ा है।

इमाम रज़ा अ० की इमामत की शुरुआत 183 हिजरी में हुई थी। उस ज़माने की हुकूमत का सेंटर बग़दाद था जिस पर हारून रशीद अपने पंजे जमाए हुए था।

हारून रशीद ने जहाँ अपने जुनूनी जुल्मो-सितम के ज़रिए शियों को निशाना बना रखा था वहीं उसने एक चाल ये भी चली थी कि नॉन-इस्लामी थॉटस ख़ास कर यूनानी फ़लसफ़े को मुसलमानों के बीच में फैलाना शुरु कर दिया था ताकि लोगों का ध्यान इन नई थियोरीज़ की तरफ़ हो जाए और अहलेबैत अ० को सियासत से अलग रखा जा सके।

इमाम रज़ा अ० ने मुसलमानों के बीच पनपते हुए सियासी माहौल की वजह से शुरु में अपनी इमामत को ज़ाहिर नहीं किया था। आप सिर्फ़ अपने ख़ास शियों और दोस्तों ही से मेल जोल रखते थे लेकिन कुछ साल गुज़रने के बाद हारून रशीद की हुकूमत अलग-अलग फ़ैक्टर्स की वजह से कमज़ोर हो गई। मौक़े को ग़नीमत समझते हुए इमाम अली रज़ा अ० ने अपनी इमामत को शहरे मदीना में ज़ाहिर कर दिया जिस से लोगों की मुश्किलों को दूर करने के लिए मैदान तैयार हो गया। ख़ुद इमाम अली रज़ा अ० फ़रमाते हैं कि जब मैं मदीने में था तो लोगों की ज़रूरतें पूरी करने के लिए इस शहर की हर गली में जाया करता था, इस शहर के और दूसरे शहरों के ज़रूरतमन्द लोग ख़ुद भी अपनी हाजतों और ज़रूरतों को मेरे सामने पेश करते थे और मैं उन्हें पूरा करता था।[1]

एक दूसरी जगह पर आप फ़रमाते हैं कि उस वक़्त जब मदीने के पढ़े लिखे लोग जमा होते थे तो मैं अपने दादा रसूले अकरम स० के रौज़े पर बैठता था, जब भी उनमें से किसी को कोई सवाल या शरई मसला पूछना होता था तो सब के सब मुझ से ही पूछते थे और मैं ही उनको जवाब देता था।[2]

हारून के मरने के बाद हुकूमत मामून के हाथों में आ गई और उसने अपने बाप के नक़्शे क़दम पर चलते हुए तय किया कि शियों के आक़ा, इमाम रज़ा अ० को ख़ुरासान आने की दावत दी जाए और आपको अपने दरबार में बिठाकर इस तरह दिखावा किया जाए कि जैसे ये हुकूमत इमाम रज़ा अ० की पसन्दीदा हुकूमत है। इस काम के लिए उसने आपको बहुत से ख़त भेजे लेकिन इमाम की तरफ़ से हर बार न में जवाब मिलता रहा। यहाँ तक कि उसके ख़तों में धमकियाँ आने लगीं। जब आपको यक़ीन हो गया कि मामून बाज़ नहीं आएगा और बदले में

शियों को क़त्ले आम का सामना करना पड़ेगा तो आपने 200 हिजरी में ख़ुरासान जाने का इरादा कर ही लिया।

मशहद का सफ़र

इमाम के सफ़र का रास्ता ख़ुद मामून ने तय किया था जो बसरे से अहवाज़ होते हुए गुज़रता था। मामून का ख़ास हुक्म था कि हज़रत[अ०] कूफ़े और क़ुम से न गुज़रें क्योंकि मामून को डर था कि अगर इमाम इन शहरों से गुज़रेंगे तो वहाँ के शियों से मुलाक़ात करेंगे और फिर अपने हालात को इन लोगों से बयान करेंगे। जिस से इन्क़ेलाब आने का ख़तरा था। बहरहाल इमाम रज़ा[अ०] अपने लम्बे सफ़र को तय करते हुए नेशापुर पहुँचे जहाँ आपका बहुत ज़बरदस्त इस्तेक़बाल हुआ।

इल्म के बेशुमार प्यासे और हदीसें लिखने वाले इमाम रज़ा[अ०] की ख़िदमत में आए और अर्ज़ किया, "ऐ फ़रज़न्दे रसूल! आपको आपके अजदाद और आपकी बुज़ुर्गी की क़सम! अपने चेहर-ए-मुबारक की ज़ियारत कराईए और अपने पिदरे बुज़ुर्गवार से एक हदीस जिसको उन्होंने अपने जद रसूले ख़ुदा[स०] से नक़्ल किया हो, हम लोगों के लिए बयान फ़रमाइए ताकि हम आपको इस हदीस के ज़रिए याद करते रहें।" ये सुनकर आपने सवारी को रोका और अमारी से पर्दा हटाने का हुक्म दिया। इस तरह सब ने जी भर के आपकी ज़ियारत की। हज़ारों की तादाद में जो लोग जमा हुए थे उनमें से कुछ फ़रियाद कर रहे थे, कुछ दूसरे गिरया कर रहे थे और कुछ ख़ाक पर तड़प रहे थे। शौक़े दीदार में चीख़-पुकार और गिरयाओ-ज़ारी का आलम ये था कि कान पड़ी आवाज़ नहीं सुनाई दे रही थी। यहाँ तक कि उलमा को लोगों से चीख़-चीख़ कर कहना पड़ा कि ऐ लोगो! ग़ौर से सुनो और लिखकर महफ़ूज़ कर लो कि ये चीज़ें तुम्हारे लिए फ़ायदेमन्द साबित होंगी।

इसके बाद इमाम रज़ा ने फ़रमाया, "ख़ुदा का इरशाद है 'ला-इला-हा इल लल्लाह' मेरा क़िला है, जो भी मेरे इस क़िले में दाख़िल होगा वह मेरे अज़ाब से महफ़ूज़ हो जाएगा।" [3]

तारीख़ के इस अज़ीम वाक़िए में मौजूद लोगों को जब गिना गया तो सिर्फ़ उन लोगों की तादाद जिन्होंने इस अज़ीम हदीस को लिखा था, बीस हज़ार से ज़्यादा थी।[4]

इमाम रज़ा[अ०] नेशापुर और दूसरे इलाक़ों से होते हुए मर्व पहुँचे। मामून की तरफ़ से आपका ज़बरदस्त इस्तेक़बाल हुआ। इमाम के तशरीफ़ लाते ही मामून ने अपने सियासी मन्सूबों को पूरा करने के लिए लम्बे चौड़े पैमाने पर कोशिशें शुरु कर दीं। सबसे पहले उसने इमाम रज़ा[अ०] से कहा कि मैंने तय किया है कि ख़िलाफ़त छोड़ दूँ और आपकी बैअत करके इसे आपको सोंप दूँ। मगर आपने इस पेशकश को क़ुबूल नहीं किया और जवाब में इस तरह फ़रमाया, "अगर ये ख़िलाफ़त तुम्हारा हक़ है और ख़ुदा ने इसको तुम्हारे लिए क़रार दिया है तो तुम्हारे लिए बिल्कुल जायज़ नहीं है कि वह लिबास जो ख़ुदा ने तुम्हें पहनाया है, उसे उतार कर दूसरे को दे दो और अगर ख़िलाफ़त तुम्हारा हक़ नहीं है तो उस हालत में भी जायज़ नहीं है कि जो चीज़ तुम्हारी नहीं है उसे मुझे दे दो।" [5]

मामून अपनी पेशकश से बाज़ नहीं आया। आख़िरकार उसने ख़िलाफ़त की पेशकश को विलायत अहदी में बदल दिया और गुस्ताख़ाना अन्दाज़ में इमाम रज़ा[अ०] से कहा कि ख़ुदा की क़सम! अगर आपने विलायत अहदी को क़ुबूल नहीं किया तो मैं आपको इसे ज़बरदस्ती इसे क़ुबूल करने पर मजबूर करूँगा। अगर फिर भी क़ुबूल नहीं किया तो आपको क़त्ल कर दूँगा। अब चूँकि आपके पास बचने का कोई रास्ता नहीं था इसलिए आपने कुछ शर्तों के साथ विलायते अहदी को क़ुबूल कर लिया। वह शर्तें कुछ यूँ थीं:

"मैं विलायत अहदी को इन शर्तों के साथ क़ुबूल कर रहा हूँ कि न ही मैं हुकूमत में कोई रोक टोक करूँगा, न फ़तवा दूँगा, न अदालत में फ़ैसले करूँगा और न किसी को मसनद पर बिठाऊँगा और न किसी को हटाऊँगा, हुकूमत में किसी क़िस्म का बदलाव नहीं करूँगा और तुम मुझे इन सारी चीज़ों से माफ़ रखोगे।" [6]

इन शर्तों से ये बात समझ में आती है कि इमाम रज़ा[अ०] ने मामून की हुकूमत को शरई तौर पर तस्लीम नहीं किया था और इसीलिए किसी भी क़ीमत पर राज़ी नहीं थे कि हुकूमत के सियासी मसलों में किसी भी तरह की दख़लअन्दाज़ी करें।

बहरहाल रस्मी तौर पर विलायते अहदी का एलान रमज़ानुल मुबारक 201 हि० में हो गया। मामून ने इस ख़बर को आसपास के तमाम मुल्कों में पहुँचा दिया। साथ ही उस ने इमाम रज़ा[अ०] के नाम का सिक्का भी जारी कर दिया। अपनी बेटी उम्मे हबीबा का अक़्द भी इमाम रज़ा[अ०] से कर दिया।

इमाम रज़ा[अ०] ने विलायत अहदी को क़ुबूल करने की शर्तों के ज़रिए और अपने ज़माने के उलमा के बीच सूरज की तरह रौशन रहकर मामून की हर चाल पर पानी फेर दिया था जिससे अहलेबैत[अ०] की हक़्क़ानियत फिर से सब पर रौशन हो गई थी।

मामून ये सब देखकर बहुत परेशान हो गया। आख़िर में उसने फ़ैसला किया कि इमाम रज़ा[अ०] को ख़त्म कर दिया जाए। ये ज़ुल्म इस तरह किया गया कि इमाम को अंगूर में ज़हर मिलाकर शहीद कर दिया गया। मशहूर ये है कि इमाम रज़ा[अ०] की शहादत माहे सफ़र 203 हिजरी में हुई थी।

1-अल उयून, 2/167, 2-कश्फ़ुल-ग़ुम्मह, 3/107, 3-अल-उयून, 2/35, 4-अल-फ़ुसूलुल मुहिम्मह, 254, 5-अल-उयून, जिल्द-2 पेज-140, 6-अल-काफ़ी, 1/489

EDUCATION

गर्ल्स एजुकेशन

■ प्रोफ़ेसर फ़ज़्ले इमाम

एजुकेशन की अहमियत से कोई भी समझदार आदमी इन्कार नहीं कर सकता है लेकिन ये भी सच है कि हमारे समाज और ख़ास कर मुस्लिम समाज में एजुकेशन पर कम ध्यान दिया जाता है। लड़कियों की एजुकेशन पर तो और भी कम ध्यान दिया जाता है। हर साल युनेस्को की तरफ़ से 8 सितम्बर को एजुकेशन डे मनाया जाता है। यह सिलसिला 1966 से चल रहा है लेकिन जितना असर पड़ना चाहिए था उतना नहीं पड़ सका है।

यहाँ एक बात का ज़िक्र ज़रूरी है। वह यह कि एजुकेशन और परवरिश दो अलग-अलग लफ़्ज़ हैं। परवरिश के बग़ैर एजुकेशन बेमानी है। परवरिश वह बुनियाद है जो अन्दर से ज़ेहन को बनाती है और तैयार करती है, जबकि एजुकेशन ऊपर से इन्सान को निखारती और संवारती है। इसलिए एजुकेशन के साथ अच्छी परवरिश बहुत ज़रूरी है। लड़कियों की परवरिश माँ जिस तरह से कर सकती है, कोई दूसरा नहीं कर सकता। एक अच्छी माँ अच्छी नस्ल पैदा करती है। किसी एजुकेशनल एक्सपर्ट का कहना है कि तुम मुझे माएं दो, मैं तुम्हें अच्छी क़ौम दूँगा। अच्छी माँओं का मतलब पढ़ी-लिखी और तरयिबत याफ़्ता माओं से है।

माँ, जिस ज़ुबान और जिस लहजे में बच्चों से बातें करती है, जिस ज़ुबान में लोरियाँ देकर बहलाती और सुलाती है, उसकी थपकियों का जो असर होता है, वह बाप की बातों का नहीं। इसीलिए पूरी दुनिया में जहाँ जाइए, जो भी फ़ार्म भरिए उसमें मादरी ज़ुबान का भी एक कॉलम रहता है, बाप की ज़ुबान का नहीं। माँ की ज़ुबान की हर हरकत और उतार-चढ़ाव को बच्चा अपनाता है। इसीलिए लड़कियों में एजुकेशन और परवरिश दोनों का होना बहुत ज़रूरी है।

एजुकेशनल एक्सपर्ट हर्बट स्पेंसर ने एक जगह लिखा है कि एक पढ़ी-लिखी माँ अपने बच्चों को एजुकेशन और परवरिश से जितना सवांर सकती है, सौ उस्तादों की दी हुई एजुकेशन उतना असर नहीं डाल सकती। बच्चे की पहली पाठशाला माँ की गोद होती है। इस गोद में जो सबक़ दिया और पढ़ाया जाता है, वह बच्चे के ज़ेहन में पत्थर की लकीर की तरह बन जाता है।

इस्लाम में लड़कियों की एजुकेशन पर ख़ास तौर पर ज़ोर दिया गया है। हदीसे रसूल है कि "हर मुसलमान लड़के और लड़की पर इल्म हासिल करना फ़र्ज़ है।"

मर्द तो बाहर की दुनिया को देखता और संभालता है लेकिन घर के अन्दर की ज़िम्मेदारी जिसे उमूरे ख़ानादारी कहते हैं वह तो औरत ही की होती है जिसमें घर के रख-रखाव से लेकर माली मामलात को चुस्त-दुरुस्त रखना, औरत ही की सूझबूझ पर बेस करता है। जाहिल औरत घर को बना और संवार नहीं पाएगी। नस्लों को तहज़ीब, और तरीक़ा माँ ही सिखाती है। इसलिए लड़कियों का एजुकेशन के मैदान में बढ़-चढ़ कर हिस्सा लेना ज़रूरी है ताकि नस्ल और क़ौम अपनी और दुनिया की तरक़्क़ी में हिस्सा लेकर नुमायाँ किरदार अदा कर सके।

दुनिया की तारीख़ को अगर देखा जाए तो यही साबित होता है कि वही लोग समाज और इन्सानी वेल्युज़ को मज़बूत करने में नाम और शोहरत हासिल करते रहे हैं जिनकी माएँ पढ़ी-लिखी, इल्मी और अदबी थीं। ●

हज़रत अली अ०:

हर चीज़ की
ज़कात होती है और
खूबसूरती की ज़कात,
पाकीज़गी है।

हमारे और वेस्टर्न कल्चर में कामयाब SUCCESSFULL WOMEN औरत का फ़र्क़

पिछली सदी से इस इश्यु पर लगातार बहस हो रही है कि समाज में "कामयाब औरत" कौन है? वेस्टर्न सोसाइटीज़ में उस औरत को 'कामयाब औरत' कहते हैं जिसके पास कामयाब रोज़गार हो, जो फ़ाइनेंशली सेल्फ़-इंडिपेंडेंट हो और जो घर और कार की मालिक हो। इसलिए ऐसी औरतें उस समाज में रोल-मॉडल के तौर पर जानी जाती हैं जो इस स्टेंडर्ड पर पूरी उतरती हों। यही वजह है कि ब्रिटेन के पिछले पी. एम. टोनी बिलेयर की बीवी, चेरी बिलेयर जिनके चार बच्चे भी हैं, उनका ज़िक्र अक्सर रोल-मॉडल के तौर पर किया जाता रहा है क्योंकि वह एक कामयाब वकालत का कॅरियर रखती हैं।

इसी तरह उस समाज में ये राय भी आम है कि बाप या शौहर पर डिपेंड होना औरत को समाज में कमतर दर्जे का मालिक बना देता है। साथ-साथ ये भी कहा जाता है कि वह औरत जो माँ या बीवी होने के साथ कोई भी आमदनी का ज़रिया नहीं रखती, उसकी कोई अहमियत नहीं, वह एक नाकाम औरत है। इसीलिए इस समाज में जब किसी औरत से ये सवाल किया जाता है कि 'आपका प्रोफ़ेशन क्या है?' या 'आप क्या करती हैं?' तो वह ये जवाब देते हुए शर्मिन्दगी महसूस करती हैं कि 'मैं सिर्फ़ माँ हूँ' या 'मैं एक घरेलू औरत हूँ'।

इसकी वजह ये है कि वेस्टर्न सोसाइटी में एक प्रोफ़शनल औरत को कमोडिटी के तौर पर देखा जाता है और उसकी अहमियत का दारोमदार इस चीज़ पर है कि वह कारोबार में कितना हिस्सा ले रही है।

इसी तरह वेस्टर्न सोसाइटी में *'मर्द-औरत के समाज में रोल'* के बारे में भी बहुत बड़ा बदलाव आया है और वह ये कि एक घर में औरत को भी कमाने का उतना ही हक़ होना चाहिए जितना कि मर्द को। इसीलिए 1996 में कैमब्रिज युनिवर्सिटी की रिपोर्ट के मुताबिक़ 1984 में 65% लोगों की राय थी कि *ये सिर्फ़ मर्द का काम है कि वह अपनी फ़ैमिली को पाले-पोसे,* जो 1994 में कम होकर 43% रह गई। इस वक़्त ब्रिटेन में 45% औरतें काम कर रही हैं और अमेरिका में 78.7%।

उधर पश्चिमी हुकूमतें भी कामयाब औरत के इस पैमाने को बढ़ावा देती नज़र आती हैं। इसलिए ऐसी औरतों की तारीफ़ की जाती है जो कि अपनी ज़िन्दगी में एक कामयाब कॅरियर चला रही हों। साथ ही साथ ऐसी माओं के लिए माली फ़ायदों का एलान भी किया जाता है जो काम करने वालों में शामिल होना चाहती हैं। इसलिए ब्रिटिश हुकूमत ने एक पॉलीसी *'बच्चों की देखभाल के लिए क़ौमी स्ट्रेटिजी'* का एलान किया, जिसके मुताबिक़ बच्चों की देखभाल के लिए बहुत सी जगहें फ़राहम की जाएंगी ताकि वह औरतें जो काम करती हैं अपने बच्चों को देखभाल के लिए इन जगहों पर छोड़ सकें। इसी तरह उन्हें माली फ़ायदे और टैक्स में छूट भी दी जाती है ताकि वह अपने बच्चों की देखभाल पर होने वाले ख़र्चों को बर्दाश्त कर सकें। *"फ़ुल टाइम मदर्स"* नामी आग्रेनाइज़ेशन के डायरेक्टर हिल किरबी कहते हैं, "ऐसी औरतों के लिए तो माली फ़ायदे हैं जो काम करती हैं लेकिन घर बैठी औरतों के लिए कोई माली फ़ायदा नहीं है।"

बदक़िस्मती से वह मुस्लिम औरतें जो पश्चिमी मुल्कों में रह रही हैं वह भी इस सोच से बहुत इम्प्रेस्ड हुई हैं और अब वह भी सोचने लगी हैं कि अपनी ज़िन्दगी में एक कामयाब कॅरियर हासिल करना बाक़ी सारे कामों से बढ़कर है।

वह भी अब ये यक़ीन करने लगीं हैं कि कॅरियर ही वह चीज़ है जो औरत को समाज में मुक़ाम और इज़्ज़त बख़्शता है। यही वजह है कि वह शादी देर से करती हैं या करती ही नहीं क्योंकि शादी को अपने कॅरियर की

राह में रुकावट समझती हैं। बच्चों की पैदाईश में भी देर करती हैं और उनकी तादाद भी कम रखती हैं या इस बारे में सोचती ही नहीं हैं। उधर वह औरतें जो कोई काम नहीं करतीं वह अपने समाज की तरफ़ से बराबर दबाव का शिकार रहती हैं कि उन्हें भी कोई काम करना चाहिए। इसीलिए वहाँ पर मौजूद मुसलमानों की बड़ी तादाद इस सोच से मुतास्सिर हो चुकी है, जिसका रिज़ल्ट ये है कि बहुत से पैरेंटस अपनी बेटियों को कामयाब कॅरियर चुनने पर भरपूर ज़ोर देते हैं जबकि हो सकता है कि वह लड़की जल्दी शादी करने के हक़ में हो और माँ का रोल निभाना चाहती हो। जहां तक इस बारे में दीन की बात है, दीन ने कभी नहीं कहा कि औरत कारोबार, जॉब या नौकरी नहीं कर सकती। बात सिर्फ़ इतनी सी है कि दीन की निगाह में औरत के कॅरियर से ज़्यादा अहम फ़ैमिली है। दीन चाहता है कि औरत के ज़ेहन में अगर सब से पहले कोई चीज़ आए तो वह फ़ैमिली हो, अपनी इस ज़िम्मेदारी को पूरा करने के बाद वह जो चाहे कर सकती है। लेकिन जब सोशल स्टेटस, जॉब, कॅरियर, कारोबार और बिज़िनेस की वजह से शादी, फ़ैमिली और बच्चों को पीछे कर दिया जाए तो बात बहुत ख़तरनाक हो जाती है क्योंकि अगर औरत को शादी, फ़ैमिली और बच्चों जैसे बेहद अहम इश्युज़ से अलग कर दिया जाए तो न सिर्फ़ ये कि फ़ैमिलीज़ बर्बाद हों जाएगीं बल्कि पूरे के पूरे समाज तबाह हों जाऐंगे क्योंकि औरत के बिना न फ़ैमिली चल सकती है और न बच्चों की अच्छी परवरिश हो सकती है। ख़ुदा ने फ़ैमिली और बच्चों की परवरिश के सिलसिले में जो क्वॉलिटी और सलाहियत औरतों को दी है वह मर्दों के पास है ही नहीं। औरत के बग़ैर मर्द चाह कर भी अपने बच्चों की अच्छी परवरिश नहीं कर सकता, जिसके बहुत से नमूने ख़ुद हमारे अपने समाज में देखने को मिल जाऐंगे, कहीं दूर जाने की भी ज़रूरत नहीं है।

गुस्सा दिल की बीमारी पैदा कर सकता है

मेडिकल साइंस का कहना है गुस्सा और दूसरों के ख़िलाफ़ उठने वाले जज़बात, दिल की बीमारी के ख़तरे की एक शुरूआती घंटी हो सकते हैं।

एक्सपर्टस का कहना है कि डाक्टर गुस्से को दिल की बीमारी के लिए एक शुरूआती इंडिकेशन के तौर पर देखते हुए मरीज़ को अपने मिज़ाज पर क़ाबू पाने को कह सकते हैं।

ब्रिटेन में जहाँ तक़रीबन 25 लाख लोग दिल की बीमारियों के शिकार हैं और हर साल लगभग 94 हज़ार इसी वजह से मर जाते हैं, वहाँ ये बीमारी मौतों की सब से बड़ी वजह है।

ख़्याल किया जाता है कि मौत और दिल की बीमारियों में इस रिलेशन की वजह लोगों का लाइफ़–स्टाइल है जैसे सिग्रेट पीना, शराब पीना, एक्र्सासाइज़ की कमी, वज़न का बढ़ जाना वग़ैरा। ये सारे फ़ैक्टर इन्सान में गुस्से और मुख़ालिफ़ाना जज़बात को जन्म देते हैं जो दिल की बीमारी के ख़तरे को बढ़ा देते हैं।

युनिवर्सिटी कालेज, लंदन के डिपार्टमेंट ऑफ़ हेल्थ के डाएरेक्टर योई–ची चनदा का कहना है, "रिसर्च से मालूम हुआ है कि शुरूआती तौर पर सेहतमन्द लोगों में गुस्से की वजह से दिल की बीमारी में 19% इज़ाफ़े की पेशेंगोई की जा सकती है। जबकि पहले से दिल की बीमारी के मरीज़ लोगों में गुस्से की वजह से 24% का इज़ाफ़ा हो सकता है।"

गुस्से का दिल की बीमारियों से रिलेशन औरतों के मुक़ाबले मर्दों में ज़्यादा था। जिससे ज़ाहिर होता है कि आम ज़िन्दगी में ज़ेहनी दबाव का असर मर्दों पर ज़्यादा होता है, जिस से वह मुस्तक़बिल में दिल की बीमारियों के शिकार हो सकते हैं।

नीदरलैंड की टलबर्ग युनिवर्सिटी के डॉक्टर जान डेनोलेट का कहना है कि ये रिसर्च इस बारे में भी सुबूत पेश करती है कि साइकालॉजिकल मामले दिल की बीमारियां पैदा होने से पहले ही उनके पनपने और फैलने का रोल अदा करते हैं। उनका कहना है कि डाक्टरों को गुस्से की अलामतों पर संजीदगी से ध्यान देना चाहिए और ऐसे मरीज़ों को साइकालॉजिकल इलाज के लिए भेजना चाहिए।

कोलंबिया युनिवर्सिटी मेडिकल सेंटर की एक टीम को एक और स्टडी से ये मालूम हुआ है कि हाइपर–डिप्रेशन का शिकार औरतें और ऐसी 63 औरतें जो डिप्रेशन दूर करने के लिए दवाएं इस्तेमाल कर रही थीं, उनमें अचानक हार्ट–अटेक होने या दिल की शदीद बीमारी का ख़तरा ज़्यादा था।

रिसर्च टीम के डाएरेक्टर, डॉक्टर विलियम वहंग का कहना है कि डिप्रेशन की शिकार औरतों के लिए ये जानना ज़रूरी है कि डिप्रेशन और दिल की बीमारी में कहीं न कहीं कोई ताल्लुक़ ज़रूर होता है। वह कहते हैं कि दिल के मर्ज़ में मुबतला होने का ख़तरा ज़्यादा होने की एक फ़ैक्टर ये भी है कि डिप्रेशन वाली औरतों में ख़ून के ज़्यादा दबाव, शुगर, कॉलेस्ट्रोल की ज़्यादती और तम्बाकू नोशी जैसी अलामतें भी आम थीं।

ब्रिटिश हार्ट फ़ाउंडेशन की जॉन डेविसन कहती हैं, "हमें अभी तक ये मालूम नहीं है कि गुस्से का दिल की बीमारी के ख़तरे में ज़्यादती से क्या रिलेशन है, लेकिन हमारा ख़्याल है कि ऐसे लोग जो अन–हेल्थी लाइफ़ स्टाइल गुज़ारते हैं, उनमें ये ख़तरा ज़्यादा हो जाता है जैसे वह तम्बाकू नोशी करते हैं या अन–हेल्थी चीज़े खाते हैं।" वह आगे कहती हैं, "हम ये भी जानते हैं कि गुस्से की वजह से हमारे जिस्म से कुछ केमिकल्स ख़ारिज होते हैं जो दिल की बीमारी के ख़तरे को बढ़ा देते हैं लेकिन हम सही तरह से ये नहीं जानते कि ऐसा क्यों होता है।"

एक्सपर्टस कहते हैं कि कभी–कभार गुस्सा आना कोई ख़तरे की बात नहीं है लेकिन जब किसी शख़्स को ज़रा–ज़रा सी बातों पर बार बार गुस्सा आता रहे तो उसे दिल की बीमारी से बचने और अपनी सेहत को बाक़ी रखने के लिए अपने लाइफ़–स्टाइल को बदलना ही पड़ेगा।

ख़ाली दुकान

■ ततहीर फ़ातिमा

मैं बहुत ग़रीब और मुफ़लिस आदमी था। शायद किसी को यक़ीन न आए कि मैं कुछ अरसे पहले ऐसी ज़िन्दगी गुज़ार रहा था कि उसको याद करके मेरी रातों की नींद उड़ जाती है, एक-एक लम्हा याद आता है। मेरे बच्चे भूक से रोते थे तो कलेजा छलनी हो जाता था। मुहल्ले में अगर अच्छा खाना पकता और उसकी ख़ुशबू हमारे घर आती थी तो लगता था कि वह हमारी ग़ुरबत में हम पर ताज़ियाने बरसा रही है। यहाँ तक कि एक दिन मैने देखा कि मेरी बड़ी बेटी पड़ोसी के बावर्चीख़ाने की खिड़की के नीचे खड़ी होकर उस से आने वाली मज़ेदार खाने की ख़ुश्बू अपने सांस के अन्दर ले रही थी जैसे खाने का लुक़मा बनाकर अपने मुँह में रख रही हो और यूँ मुँह चला रही थी जैसे खा रही हो।

मैं हमेशा से ही ऐसा नहीं था। मैंने एक छोटे से कारोबार की बुनियाद रखी थी जो बुरी तरह से डूब गया था।

"मुज़र"!

"हूँ!" मैं चौंका! सामने मेरा बेहतरीन दोस्त अदी खड़ा था।

"क्या बात है? आज कल बहुत ही ज़्यादा ग़ायब रहते हो?" फिर वह मुस्कुराकर आगे बढ़ा और गले लग गया।

"यार! कारोबार डूब गया है। सरमाया हाथ से चला गया, क्या करूँ?"

मैं क़रीब-क़रीब रो पड़ा। ख़ुद मेरे इस दोस्त के हालात भी अच्छे नहीं थे। मेहनत मज़दूरी करता था। जब मेरे हालात अच्छे थे तो मैं उस की मदद करता रहता था।

"मुज़र, दिल छोटा न करो आज शबे जुमा है, दुआएं पढ़ लेते हैं।" उसकी मेरी दोस्ती की बुनियाद इसी पर थी। वह हमेशा दर्द का मरहम दुआ में ढूँढता था और मैं मरहम नहीं खोज पाता था।

"मुज़र! यार मुज़र बात सुनो!" दुआ पढ़ते-पढ़ते यकायक उसकी आवाज़ रुक गई और वह जोश से कहने लगा। अदी की ख़ुशी से चहकती आवाज़ पर मैं हैरान होकर उसे यूँ देखने लगा कि गोया मेरी लाटरी खुलेगी अभी-अभी! और वह खुल भी गई।

"ख़र्चा कहाँ से आएगा?" मैंने उदासी से कहा। मेरे पास तो एक कौड़ी भी नहीं थी। घर भी अब अन्धेरे में डूबा रहता था। रौशनी का इन्तेज़ाम जो न था। आख़िर पेट भरे तो रौशनी का इन्तेज़ाम किया जाए।

हम अदी की बैठक में बैठे हुए थे और हमारे सामने ग्लास में शर्बत रखा था, "अच्छा!" अदी सोच में डूब गया।

"अरे फ़िक्र की क्या बात है अदी? वह हमारी शादी के ज़ेवरात हैं ना!" अदी की बीवी जो काफ़ी देर से हमारी बातें सुन रही थी, चादर ओढ़कर तेज़ी से बैठक में दाख़िल हुई। अदी ने दोनों हाथों से सर के बाल पकड़ कर खींचे। मैं समझा वह बीवी के बेधड़क मेरे सामने आने पर परेशान है? मगर वह तो पूरे पर्दे में थी या शायद ज़ेवर वाली बात बताने वाली नहीं थी।

"ओह!" अदी धीमे लहजे में बोला, "ये ख़्याल मेरे ज़हन में क्यों नहीं आया।"

अदी की बीवी अन्दर गई और कुछ लम्हों बाद एक ख़ूबसूरत सी पोटली लाकर मेरे सामने रख दी।

"शाबाश! मुझे नहीं मालूम था कि मेरी बीवी भी मेरी तरह ही सोचती है।" अदी की बात सुनकर मैं हैरान रह गया। क्या मियाँ-बीवी इतने हम-ख़्याल होते हैं!

"मुज़र! हम जैसे ग़रीब आप की यही मदद कर सकते हैं। मगर इसके बदले आपको हमारा एक काम भी करना है।" अदी की बीवी के अलफ़ाज़ ने मेरे दिल को अपनी गिरफ़्त में ले लिया, ये सब कम नहीं था!

"तुम ने अपना पूरा सरमाया एक दिवालिये को दे दिया है। अब इसके बदले में तो मैं ग़ुलाम हूँ तुम लोगों का।" मेरी आंखे भीग चुकी थीं।

"अरे मुज़र! इनका ये मक़सद नहीं था। बल्कि! हमें सिर्फ़ ये कहना था कि

जब मुलाक़ात हो तो तुम हमारा सलाम पहुँचा देना।" अदी और उसकी बीवी रोने लगे।

"चचा जान! आप... हमारा भी सलाम कहेंगे ना!" अदी के पाँच साला बेटे की बात सुनकर मैं ज़मीन पर बैठता चला गया...

मैं यक़ीन नहीं कर पा रहा था कि उस शहर में दाख़िल हो चुका हूँ जहाँ मेरा महबूब है, मेरा माशूक़ है।

"मुसाफ़िर हो? कहाँ जाना है?" एक बुज़ुर्ग शख़्स ने ग़ौर से मुझे देखा।

"आँ... हाँ... मैं यहाँ.... नया हूँ!" मैंने खुद को संभाला।

"अच्छा! कहाँ रुकोगे?" बुज़ुर्ग शख़्स ने दोस्ताना अन्दाज़ में पूछा।

"मम..... मुझे यहाँ किसी जगह का पता नहीं।" मैंने बेबसी से अपनी चारों तरफ़ चलते फिरते लोगों को देखते हुए कहा।

"फ़िक्र न करो! मैं मुहल्ला बनी हाशिम का रहने वाला हूँ, अपने कमरे किराए पर देता हूँ।" बुज़ुर्ग शख़्स की मेहरबान आवाज़ और आँखों में हमदर्दी ने मेरा दिल जीत लिया।

"मुहल्ला बनी हाशिम!" मैं चौंका। क्या मैं उस अज़ीम जगह पर हूँ?... नहीं... नामुमकिन!" मैंने धीमे से कहा। मुझे यक़ीन नहीं आ रहा था। "लेकिन.... लेकिन मैं आपके पैसे नहीं दे सकता।" मैंने झिझकते हुए दिल की बात कह दी।

"बेटा! मैं तुम से एक पैसा भी नहीं लूँगा और अपने घर में ठहराऊँगा। खाना भी मेरे ज़िम्मे!" न जाने क्यों वह मुझ पर इतना मेहरबान था।

मेहरबान बूढ़े ने मेरा कंधा थपथपाया। अस्ल में डाकुओं ने सारे क़ाफ़िले वालों को लूट लिया था और मेरा सब कुछ लुट चुका था यहाँ तक कि मेरे दोस्त अदी के तोहफ़े भी और उसकी बीवी के ज़ेवर भी।

"ये घर देखो!" बुज़ुर्ग आदमी ने आँखों से इशारा किया। "ये हसीन और ख़ूबसूरत दरवाज़ा उन्हीं का है!" बुज़ुर्ग आदमी ने मुहब्बत में डूबकर एक दरवाज़े की तरफ़ इशारा करते हुए जो बहुत ही सादा था। कहा, "सुबह-शाम में एक दफ़ा ज़रूर यहाँ से गुज़रता हूँ और जब उनको देख लूँ तो समझ लो कि मेरा दिन यूँ लगता है कि... ख़ैर छोड़ो! मैं जो बात समझा नहीं सकता, लफ़्ज़ों में क्या बयान करूँ। जब तुम देखोगे तो जो तुम पे गुज़रेगी उसे खुद ही समझ जाओगे।" ये कहकर वह हलके से हंसा और एक घर के दरवाज़े पर दस्तक देने लगा।

मैं नमाज़ पढ़कर वापस आया तो देखा कि बुज़ुर्ग शख़्स अपनी बीवी के साथ बैठा था। सामने एक दस्तरख़ान बिछा था और कुछ मज़ेदार खाने रखे थे।

"आओ बेटा! नाश्ता!" बुज़ुर्ग शख़्स की चमकती आँखें मुस्कुराईं।

"मैं! ये खाऊँ!" मैंने हैरत और हसरत से पूछा। "इन खानों के एक-एक लुक़मे के लिए मेरे बच्चे तड़पते हैं।" मैं अपने दर्द को दबाने लगा। दिल का ये दर्द शायद बुज़ुर्ग शख़्स ने मेरी आँखों में पढ़ लिया।

"बेटे! कितनी अजीब बात है! मैंने अब तक तुम्हारा नाम नहीं पूछा और यहाँ आने का मक़सद भी नहीं।" बुज़ुर्ग शख़्स की जहाँनदीदा बीवी ने उसको घुड़का।

"बच्चे को भूक लगी है। बेटा! जाओ हाथ धो लो, मैं और तुम्हारे चचा कब से दस्तरख़ान पर तुम्हारा इन्तेज़ार कर रहे हैं।" मैं जो कि अपने दर्द के भंवर में डूबा हुआ था, चौंका और हाथ धोकर दस्तरख़ान पर आ गया।

"हाँ, बेटा! मैंने कुछ पूछा था।" बुज़ुर्ग शख़्स ने नाश्ते के बाद हाथ धोकर इत्मिनान के साथ बैठकर पूछा।

"मेरा नाम मुज़र है। मैं इसी दरवाज़े के पीछे रहने वाले शख़्स से मिलने आया हूँ।" मैंने बेधड़क कहा और अपनी ज़िन्दगी के बारे में सब कुछ बयाँ कर दिया।

"मुज़र! जज़बे ज़िन्दा हों तो मंज़िल साफ़ नज़र आती है। इश्क़ हो तो मंज़िल हाथ आ ही जाती है। वैसे ये एक हज़ार हैं। तुम रख लो। नया शहर है, तुम्हें ज़रूरत हो सकती है।" बुज़ुर्ग शख़्स ने जज़बात से भरे लहजे में कहा।

"जाफ़र! आप इसको अभी इसी वक़्त उनके पास ले जाइए और मेरा सलाम न भूलिएगा और हाँ! ये भी ले जाइए।" ख़ातून ने एक ढका हुआ बर्तन सामने रख दिया।

मैं हैरान सा रह गया। मैं परेशान था कि इस आलमे गुरबत में एक अन्जान

इन्सान को सिर्फ़ इसलिए अहमियत दी जा रही है कि हमारा महबूब एक है।

ऐ ख़ुदा! मैं तेरी मुहब्बत के क़ाबिल न था। अब बस मुझे अपने और मेरे महबूब से मिला दे।

मैंने कैसे उस दरवाज़े को पार किया, ये मेरा रब ही जानता है। इश्क़ो मुहब्बत की ख़ुशबू हर गोशे से निकल कर आर रही थी। हर तरफ़ एक अन्जानी सी रौशनी थी।

"मुज़र!"

"हूँ!" मैं चौंका।

बुज़ुर्ग शख़्स मेरी कैफ़ियत पर मुस्कुराया। जैसे कह रहा हो कि ख़ुद को संभालो, यहाँ चार सू इश्क़ की कहकशाएं हैं, कहीं डूब न जाना। बैठक में आकर हैरान था। मुख़तलिफ़ रंग मेरी साँसों के ज़रिए अन्दर जा रहे थे। ख़ुशियों का तूफ़ान था और मैं उस तूफ़ान में डूबा हुआ।

"बैठो!" बुज़ुर्ग शख़्स गहरी मुस्कुराहट से मुझे देख रहा था। मैं ऐसे बैठा जैसे अभी-अभी वह अन्दर आएंगे और मैं .....

"मुज़र! हौसला रखो।" बुज़ुर्ग शख़्स ने मेरा शाना मेहरबानी से थपथपाया।

"मैंने बहुत सी ग़लतियाँ की हैं। मम.... मैं.... कैसे उनका सामना करूँगा। मेरा दिल अपनी कोताहियों और ग़लतियों से ग़मगीन हो गया। "क्या वह मेरे सलाम का जवाब देंगे?" मैंने मेहरबान और शफ़ीक़ बुज़ुर्ग से पूछा!

"अरे! वह तो सरापा मुहब्बत हैं.... मुहब्बत! मेरा बस चले ना तो मैं उनके क़दमों की ख़ाक बन जाऊँ।" क़दमों की आवाज़ पर मेरी सांस रुकने लगी। "क़दमों की अवाज़ बता रही थी कि वह आ रहे हैं" मैंने बुज़ुर्ग शख़्स से कहा और जूँ ही क़दमों की आवाज़ रुकी मैं फ़ौरन खड़ा हो गया। कुछ लम्हे बाद वह सामने थे। मेरे सामने.... "ओह! ये... ये..... मेरे इतने क़रीब! मैं उनको छू सकता हूँ! मैं उनको देख रहा हूँ अपनी इन आँखों से। ओह! ओह! ऐ ख़ुदा!!! मैं

तो बहुत हक़ीर शख़्स था। तूने मुझ में क्या देखा कि इतना बाइज़्ज़त बना दिया? मैं तो गुनहगार था, तूने क्या देखा कि इतना बुलंद मरतबा बना दिया कि..... मेरे.... मौला..... इमाम ..... जाफ़र सादिक़[अ०] की ज़ियारत करवा दी। मैं ख़ुद पर क़ाबू न रख सका, उनके क़दमों में गिर गया। उनके क़दमों की ख़ाक...बहिश्त की ख़ाक! उनके लिबास की बू.... जन्नत की हवाओं की ख़ुशबू! उनके महकते हाथ, मेरे लबों की मंज़िल!

मैं तो गूँगा हो चुका था। ज़ुबान तो शायद मैं कहीं भूल ही आया था। मैं ऐसे उनको देख रहा था कि आँखों के रास्ते उनको दिल में उतार लूँ। वापस जाकर अदी और उसके घर वालों और अपने बच्चों को दिखाऊँ कि ये देखो.... मैं मुज़र हूँ। ये मेरी आँखें देखो, इन से मैंने अपने मौला को देखा है। ये होंट! तुम देख रहे हो इन से नर्म-मुलायम गुदाज़ हाथ का बोसा दिया है। और ये दोनों हाथ! तुम न समझना कि ये आम हाथ हैं इन से मैंने उनका लिबास छुआ है। और ये पाँव...! अरे लोगो! इन से चल कर मैं उनके घर गया था। उनके घर की ख़ाक पर क़दम रखे थे।

आह! मेहरबान आक़ा!

बुज़ुर्ग बूढे जाफ़र ने मेरा तआरुफ़ करवाया। इतनी देर में एक मुलाज़िम पानी रख गया। उन्होंने पानी प्याले में निकाल कर मुझे दिया तो मैंने झपट कर उनका हाथ पकड़ लिया। उन्होंने अपनी ख़ूबसूरत मुस्कुराहट से मेरा हौसला बढ़ाया तो मैंने प्याला पकड़ा और यूँ पीने लगा गोया आबे हयात पी रहा हूँ। मुझे हौसला मिला। मैंने तमाम लोगों के सलाम पहुँचाए और डाकुओं का तज़किरा भी किया जिन्होंने अदी के और उसकी बीवी के तोहफ़े लूट लिए थे जो मैंने उनके हुज़ूर में पेश करने वाला था। मुझे एक दम अदी और घर की याद आने लगी। मेरा जिस्म टूटने लगा।

"मुज़र! परेशान न हो...जब कूफ़े जाना तो एक दुकान किराए पर लेकर बैठ जाना।" मैं महसूस कर रहा था कि मेरी ग़रीबी के सियाह बादल छट रहे हैं।

"मगर मौला! बेचने का सामान कहाँ से लाऊँगा?" दुकान का तो मसला नहीं है।" मैंने अपने इमाम की हमदर्दी और बेपनाह शफ़क़त पर एक सवाल और कर दिया।

"मुज़र! ये सोचना तुम्हारी ज़िम्मेदारी नहीं है। तुम अल्लाह की रहमत का सहारा लेकर दुकान में बैठ जाओ। जिस ख़ुदा ने तुम्हें पैदा किया है वह तुम्हें भूलेगा नहीं।" मेरा दिल चाहा कि अपना सर पीट लूँ। अरे ये कोई मामूली इन्सान नहीं, मौला व आक़ा हैं और मैं इतनी जुर्अत के साथ पूछे जा रहा था।

"ये मेरी बीवी ने आज आपके लिए बनाया था। अगर क़ुबूल कर लें तो मेरा घर ईद मनाएगा।" बूढ़ा शख़्स बेचारगी से गोया हुआ। उनकी लतीफ़ मुस्कुराहट पर उसकी आँखें चमक उठीं।

"आपका एहसान, आपने क़ुबूल किया। मेरे माँ-बाप आप पर फ़िदा हों।" बुज़ुर्ग शख़्स बेचैन हो गया।

मदीना और कूफ़ा! कूफ़ा और मदीना?"उदास न हो! मौला के लिए फ़ासले कहाँ अहमियत रखते हैं।" मेरे कानों में हवाओं ने सरगोशी की। जब मैं वापस पलटा तो यूँ लगा.... जैसे सूरज अपनी गर्मी को ठंडक में बदल रहा हो कि मुझे गर्मी न लगे.... हवाएं मेरा बोसा ले रही हैं, सूरज की किरनें मेरी आँखें चूम रही हैं, रेत उड़-उड़ कर मेरे लिबास में मौजूद आक़ा की महक छीन रही है।

"मुज़र!" मैं चौंका। "मुबारक हो!" ये हवाएं, पहाड़, फूल, कलियाँ सब मेरे कानों में सरगोशियाँ कर रहे थे।

.....

कूफ़े आकर, जैसा कि मेरे मौला ने फ़रमाया था मैं एक ख़ाली दुकान किराए पर लेकर बैठ गया। कुछ रोज़ बाद एक शख़्स आया।

"भाई मेरे पास अच्छा सामन है, क्या बेचोगे?"

"बिल्कुल बेचूंगा! मगर मेरे पास रक़म नहीं कि मैं आपका सामान ख़रीद सकूँ!" मुज़र ने साफ़गोई से काम लिया।

"अरे भई कोई बात नहीं! तुम सामान बेचो, अस्ल रक़म मुझे दे देना और मुनाफ़ा तुम्हारा।" उस शख़्स ने हंसते हुए कहा और समान भिजवा दिया।

मैंने बिस्मिल्लाह करके अदी को साथ मिला लिया। अदी मेहनत मज़दूरी के बाद फ़ालतू वक़्त मुझे देने लगा। यूँ सामान निहायत अच्छे मुनाफ़े के साथ बिकने लगा। फिर एक और शख़्स ने सामान रखवाया तो वह भी अच्छे मुनाफ़े पर बिक गया और इस तरह मेरे पास अच्छी ख़ासी रक़म जमा हो गई। अब मैंने ज़ाती कारोबार शुरु कर दिया जिससे मुझे बहुत मुनाफ़ा हुआ और इस तरह मेरे हालात बेहतर होते चले गए। उधर अदी ने भी एक दुकान ख़रीदकर कारोबार शुरु कर दिया था और आज हम दोनों जो कि एक-एक लुक़मे के मोहताज थे, इस क़ाबिल हैं कि कई घरों की मदद कर रहे हैं। मैं नहीं समझता कि इसमें मेरा कोई कारनामा है। जबकि अदी और मेरी बीवी का कहना सोला आने सही है कि तुम्हारे सर पर मौला ने हाथ रखा था जिस से तुम्हारा ज़हन चलने लगा है।

शायद यही वजह है कि मैं आज पलट कर देखता हूँ तो यूँ लगता है कि इमाम से मुलाक़ात से पहले वाला मुज़र कोई और था और आज का मुज़र कोई और है। मेरा तजुर्बा ये कहता है कि मैं इमाम से मिला था लेकिन अदी तो न मिला था.... मगर हम दोनों को सहारा उसी बन्द दरवाज़े के पीछे से मिला .... यानी! इमाम ज़ाहिर हो या ग़ायब! वह दर्दे दिल का मसीहा है मगर ज़रूरत इस बात की है कि हम ख़ुद को उस तक पहुँचा दें। चाहे अदी की तरह दिली लगाव हो या मेरी तरह बाक़ाएदा मुलाक़ात।

"मगर दोनों हालतों में फ़र्क़ कहाँ?" मेरी बीवी ने मेरे कन्धे पर हाथ रख कर कहा तो मैं चौंका।

दरअस्ल मैं अपने कमरे में लगे आईने के सामने खड़ा था। अपने आप से गुफ़्तगू में इतना मसरूफ़ था कि उसके आने का एहसास तक न हुआ।

"मुज़र! यक़ीन करो! जब से तुम इमाम से मिले हो मैं अब तुम से इतनी मुहब्बत करती हूँ कि बता नहीं सकती।

सोने का सलीक़ा

हज़रत अली अ० और साइंस की नज़र में

सै० आले हाशिम रिज़वी
यूनिटी मिशन स्कूल, लखनऊ

इंसान की ज़िंदगी में नींद की बहुत अहमियत हैं इसीलिए ख़ुदा वंदे आलम ने दिन के साथ रात भी बनाई है ताकि दिन भर की भाग-दौड़ और काम-काज के बाद इंसान के थके हुए जिस्म को कुछ घंटे आराम मिल सके और वह चैन से सो सके। सेहतमंद रहने के लिए पूरी ख़ुराक के साथ पूरी नींद भी बहुत ज़रूरी हैं जिस तरह हर काम का एक सलीक़ा होता है उसी तरह लेटने और सोने के भी कुछ आदाब और सलीक़े हैं। हज़रत अली अ० फ़रमाते हैं, "1- अल्लाह के ख़ास बंदे यानि नबी और पैग़म्बर सीधे सोते हैं और वह सोते में भी ख़ुदा की 'वही' के मुंतज़िर रहते हैं। 2- मोमिन क़िबले की तरफ़ मुंह करके दाईं करवट सोते हैं। 3- बादशाह और दौलतमंद लोग बाईं करवट सोते हैं ताकि उनकी ग़िज़ा हज़्म हो सकें। 4- कुछ लोग पेट के बल औंधे मुंह सोते हैं जो शैतानी तरीक़ा और आफ़त रसीदा होने की निशानी है।

इमाम अली अ० ने सोने के जो तरीक़े बताए हैं, आइए उन्हें ध्यान में रखते हुए देखें कि आज की माडर्न रिसर्च और साइंस इस बारे में क्या कहती हैं।

दाईं करवट सोने को हज़रत अली अ० ने मोमिन का तरीक़ा बताया है। साइंस के मुताबिक़ दाईं करवट सोने से बदन पर ज़ोर कम पड़ता है और दिल ज़्यादा आसानी से जिस्म को ख़ून और आक्सीज़न पहुंचाता रहता हैं। जिसके नतीजे में दिमाग़ की सोचने की ताक़त कम नहीं होती। रिसर्च ये भी बताती है कि दाईं करवट सोने से ज़िहानत और अक़्ल में भी इज़ाफ़ा होता है।

इमाम अली अ० ने बाईं करवट सोने को हाज़मे के लिए फ़ाएदेमंद बताया है। दरअस्ल साइंस के मुताबिक़ हाज़मे के सिस्टम में लीवर अहम रोल निभाता है और लीवर जिस्म के दाईं तरफ़ होता हैं। इसलिए खाना हज़्म करने के लिए अच्छा यही है कि बाईं करवट सोया जाए ताकि लीवर और हाज़मे के सिस्टम पर कोई दबाव न पड़े। इसीलिए जिन लोगों का हाज़मा सही नहीं होता उन्हें डाक्टर बाईं करवट सोने की सलाह देते हैं। इसके अलावा माँ बनने वाली औरतों को भी बाईं करवट लेटने की सलाह दी जाती है ताकि प्लेसेन्टा तक न्युट्रीशन और ख़ून ज़्यादा पहुंचे।

अब आइए उस तरीक़े के बारे में बात करते हैं जिसे इमाम अली अ० ने बुरा बताते हुए उसे शैतानी तरीक़ा कहा है यानी पेट के बल औंधे मुंह लेटकर सोना। साइंस भी इस तरीक़े से सोने को ग़लत और नुक़्सानदेह बताती हैं औंधे मुंह लेटने से रीढ़ की हड्डी पर ज़ोर पड़ता है और नर्वस सिस्टम पर भी ग़लत असर पड़ता है जिससे घबराहट के आसार पैदा होने लगते हैं साइंस ये भी कहती है कि इस तरह लेटने वाले ज़िद्दी और लड़ाकू मिज़ाज के हो जाते हैं। ग़लत तरीक़े से सोना बहुत सी बीमारियों को दावत देता है जिनमें नुमायां तौर पर पीठ दर्द, जिस्म का बेडौल होना और माइग्रेन वग़ैरा हैं।

मुनासिब तरीक़े से लेटकर सोना इंसान को और स्मार्ट बना देता है। साथ ही उसकी पर्सनाल्टी को बिगड़ने भी नहीं देता। इसलिए सोने के सलीक़े को अहमियत न देना बहुत बड़ी नादानी होगी। ये सारी बातें साइंस ने काफ़ी रिसर्च के बाद हमारे सामने रखी हैं लेकिन इमाम अली अ० इन्ही बातों को अब से 1400 साल पहले ही बता गए थे।

ज़ाहिर होती है...

इंसान की क़ाबिलियत उसके अख़लाक़ से ज़ाहिर होती है।
इंसान की फ़ितरत उसके किरदार से ज़ाहिर होती है।
इंसान की नफ़रत उसके हसद से ज़ाहिर होती है।
इंसान की जिहालत उसके ग़ुस्से से ज़ाहिर होती है।
इंसान की शफ़्क़त उसकी हमदर्दी से ज़ाहिर होती है।
इंसान की मसर्रत उसके जज़्बात से ज़ाहिर होती है।
इंसान की हिमाक़त उसकी गफ़्तगू से ज़ाहिर होती है।
इंसान की फ़िरासत उसके सब्र से ज़ाहिर होती है।

वीमेन राइट्स और आज़ादी के नारे

औरतों के राइट्स और आज़ादी के नारों के तहत पश्चिमी दुनिया से उठने वाले वीमेन फ़्रीडम मूवमेंट ने औरतों के समाजी और दूसरे मसलों का हल किसी हद तक हमें दिया है। ये हक़ीक़त मानना पड़ेगी कि इस मूवमेंट और ग्लोबलाइज़ेशन के बढ़ते हुए असर से इंटरनेशनल डे ऑफ़ वीमेन की अहमियत पहले के मुक़ाबले में कई गुना बढ़ चुकी है। ये मूवमेंट जो अब वेस्टर्न कल्चर का एक अटूट हिस्सा बन चुका है इसके खुले हुए एम्स एंड ऑबजेक्टिवस ये हैं कि औरत को ज़िन्दगी के हर मैदान में वही राइट्स और आज़ादियाँ हासिल हों जो मर्द को हासिल हैं यानी दफ़्तरों और कारख़ानों में जॉब, बिज़िनेस एक्टिविटीज़ और दूसरी तफ़रीहों और खेल-कूद में औरतों को मर्दों के शाना-बशाना चलने का पूरा-पूरा हक़ हासिल हो और समाज, मर्द-औरत की बराबरी के बुनियादी उसूल पर आगे बढ़े।

ज़ाहिरी तौर पर बड़े ख़ुशनुमा और दिलफ़रेब मक़सद और एजेंडों से भरे हुए इस मूवमेंट का दावा है कि औरत को उसके अस्ल राइट्स इसी मूवमेंट और माडर्न कल्चर

ने दिए हैं लेकिन अगर देखा जाए तो इसी मूवमेंट का नतीजा ये है कि आज वेस्टर्न कल्चर की औरत का दामन पाकीज़गी, इफ़्फ़त, हक़ीक़ी सेक्योरिटी के एहसास, अम्नो-सुकून, एहतेराम, विक़ार और खुशियों से ख़ाली है।

औरतों की आज़ादी और बेबाकी इस हद तक पहुँच चुकी है कि शर्मो-हया और पाकीज़गी उनके लिए बेमानी अलफ़ाज़ हैं। वेस्टर्न समाज की अख़लाक़ी साख तबाही के दरवाज़े पर है और ख़ुद वहीं के बहुत से थिंकर्स और बुद्धिजीवी खुले तौर पर अपने लिट्रेचर में इस आज़ादी पर कड़ी तनक़ीद कर रहे हैं। हक़ीक़त में ज़िन्दगी के हर हिस्से में औरतों को मर्दों से मुक़ाबले का मौक़ा देकर पश्चिमी दुनिया की जागीरदाराना सोच ने अपने लिए माली फ़ाएदे और दुनियावी तरक़्क़ी की राहें ढूँढने की कोशिश की है। एक तरफ़ तो इस सोच ने औरत को घर की चारदीवारी के अम्नो-सुकून से बाहर निकाल कर फ़ैक्ट्रियों, कारख़ानों और आफ़िसेस में ला खड़ा किया और यूँ मेन-पॉवर को बढ़ाकर बेमिसाल माली फ़ाएदे हासिल किए। दूसरी तरफ़ मीडिया की दुनिया में औरत के हुस्न को अपने लिए 'कमोडिटी' बनाके इस्तेमाल किया गया। दोनों रास्तों के ज़रिए पश्चिमी दुनिया के सरमायादार तबक़े ने अपनी माद्दी तरक़्क़ी को बुलन्दियों तक पहुँचा दिया। इस हैरत भरी तरक़्क़ी और चकाचौंध ने दूसरे मुल्कों को भी अपनी तरफ़ खींचा और यूँ चन्द ही सालों में पश्चिमी दुनिया की ये दुनियावी तरक़्क़ी और जागीरदाराना सोच अपनी सारी मुसीबतों समेत पूरी दुनिया में फैल गई। ग्लोबल कम्पनियों ने डेवलपिंग मुल्कों की हुकूमतों को चमकती हुई एकानॅमी का झांसा देकर औरतों से मुताल्लिक़ अपने एजेंडे को भरपूर ताक़त दी। अख़लाक़ी और समाजी तबाही जैसे अहम इश्युज़ से नज़र फेरने का नतीजा ये हुआ कि आज हमारे समाज समेत दूसरे मुल्कों में समाजी, सियासी और माली एतेबार से औरतों को आजादी के नाम पर बेवकूफ़ बनाया जा रहा है।

सरकारी और इंटरनेशनल सरपरस्ती में मीडिया जिस तरीक़े से औरतों के रोल को ज़लील कर रहा है और उनकी हैसियत को मिटा रहा है उसने औरतों के लिए हर मुक़ाम पर नाख़ुशगवार माहौल पैदा कर दिया है। इस बारे में ह्यूमन राइट्स कमीशन की सिर्फ़ ये रिपोर्ट ही आँखें खोल देने के लिए काफ़ी है कि "औरतों के साथ पेश आने वाले वाक़िआत के पीछे कमज़ोर सिस्टम, क्रप्ट पुलिस या मुजरिमों की सरकारी और समाजी सरपरस्ती से ज़्यादा अस्ल वजह मीडिया के ज़रिए औरतों का बेजा दिखावा और नुमाइश और उनको 'तिजारती सामान' के तौर पर पेश किए जाने की पॉलीसी है।" इस रिपोर्ट से आसानी से ये अन्दाज़ा लगाया जा सकता है कि औरतों के साथ होने वाले एक्सप्लॉएटेशन और समाजी नाइन्साफ़ियों की अहम वजह मीडिया की ग़ैर अख़लाक़ी पॉलीसी है और इसी पॉलीसी का नतीजा है कि औरतों के अस्ली इश्युज़, जिनमें सबसे ख़ास इंसेक्योरिटी का एहसास है, पीछे डाल दिये गए हैं। मामला ये है कि पश्चिमी दुनिया के वीमेन राइट्स मूवमेंट का असर ये हक़ीक़त खोले देने के लिए काफ़ी हैं कि ये मूवमेंट औरतों को उनका हक़ीक़ी समाजी मुक़ाम देने में न सिर्फ़ ये कि नाकाम है बल्कि इसने आज की औरत से उसकी अस्ली हैसियत भी छीन कर उसे बीच चौराहे पर ला खड़ा

किया है। हम सभी को और दूसरे सभी समाजी तबक़ों को इस हक़ीक़त को समझ लेना चाहिए कि औरत के अस्ली राइट्स, आज़ादी, मुक़ाम, इज़्ज़त और पाकीज़गी का हक़ीक़ी मुहाफ़िज़ वेस्टर्न सिस्टम नहीं बल्कि वह दीनी सिस्टम है जिसने चौदह सौ साल पहले भी औरत का दामन हक़ीक़ी सेक्योरिटी के एहसास, अमनो-सुकून और हमेशा की राहतों से भर दिया था और आज भी यही सिस्टम औरत को उसका अस्ली मुक़ाम और राइट्स देने की पूरी ताक़त रखता है। इसलिए ये ज़रूरी है कि वीमेन राइट्स के लिए उठाए जाने वाले क़दम वेस्टर्न एजेंडे के तहत उठाने के बजाए अपनी दीनी वेल्यूज़ और रिवायात को सबसे ऊपर रख कर उठाए जाएं। सबसे पहले एजुकेशन, सेहत, विरासत और मालिकाना हक़ जैसे राइट्स जो दीन ने औरत को दिए हैं, औरत को देकर उसका एहतेराम किया जाए। इसी सूरत में औरतों के साथ होने वाली समाजी नाइन्साफ़ियों, ज़्यादतियों, समाजी तास्सुब और मुश्किलों का हल निकाला जा सकता है।

दीन और वीमेन राइट्स

हम दीन के एहसानों को याद नहीं रखते, बस उन मामलों में उलझे रहते हैं जो हमारे दिल की तंगी की वजह से पैदा होते हैं। फिर हम शिकायतें करते हैं कि हमारे दीन ने औरत की हैसियत को कम किया है। जबकि दीन ने औरत को वह राइट्स दिए हैं जो किसी और मज़हब ने नहीं दिए।

दुनिया की किसी भी मज़हबी किताब में औरतों के नाम से कोई सूरा मौजूद नहीं है लेकिन क़ुरआन वह अकेली आसमानी किताब है जिसमें औरतों के नाम (निसा) का एक पूरा सूरा मौजूद है।

ख़ुदा वंदे आलम ने साफ़ कर दिया है कि मर्द और औरत में से किस का दर्जा बड़ा है और किसका कम, "मोमिन मर्द और मोमिन औरतें आपस में सब एक दूसरे के वली और मददगार हैं कि ये सब एक दूसरे को नेकियों का हुक्म देते हैं और बुराई से रोकते हैं।" (सूरए तौबा/71)

मार्डनिज़्म का मतलब हम ने ये ले लिया है कि मर्द और औरत पूरी तरह से आज़ाद हो जाएं और उन्हें कोई रोक-टोक न हो।

पश्चिमी दुनिया ने जब इस तरह की आज़ादी और राइट्स औरत को दिए तो आज उसके नतीजे हमारे सामने हैं:-

आज वहाँ नाजाएज़ बच्चे जाएज़ बच्चों से कहीं ज़्यादा हैं।

यही बच्चे फ़्युचर के जराएम पेशा बनते हैं।

वेस्टर्न थिंकर्स इस रुजहान से परेशान हैं और इस इश्यु पर किताबें लिखी जा रहीं हैं।

औरत के लिए "बैक टू होम" का नारा लगाया जा रहा है।

पश्चिमी दुनिया ने औरत को कुछ राइट्स तो दिए लेकिन बदले में औरत ने अपना सुकून, शर्म, हया और घर जैसे पुरसुकून माहौल को छोड़ दिया। इतना कुछ गंवाकर भी उसे मिला तो सिर्फ़ नाम की आज़ादी।

क्या हम भी यही चाहते हैं कि इतना बेहतरीन लाइफ़ सिस्टम जो दीन ने दिया है, उसे छोड़कर ग़ैरों से रहनुमाई हासिल करें?

दीन ने औरत को कमाने की ज़िम्मेदारी से अलग रखा है और उसे एक ख़ास ज़िम्मेदारी दी गई है यानी उसे घर पर ध्यान देने पर उभारा गया है।

आज पश्चिमी दुनिया में इस्लाम तेज़ी से

फैलता जा रहा है। इसमें ज़्यादातर एजुकेटेड औरतें है और ये औरतें यही कहती हैं कि जो राइट्स और सेक्योरिटी इस्लाम में है, वह कहीं और नहीं।

औरत को इस्लाम में इतनी आज़ादी है कि वह अपनी मर्ज़ी से बिज़िनेस कर सकती है, अलग

दीन इन्सानियत के लिए इज़्ज़त, विक़ार और राइट्स की हिफ़ाज़त का पैग़ाम लेकर आया। दीन से पहले समाज का हर कमज़ोर तबक़ा ताक़तवर के आगे झुका हुआ था और समाज में औरतों की हालत सबसे ज़्यादा ख़राब थी। कुरआनो-सुन्नत में दिए गए राइट्स को ग़ोर से पढ़ें तो मालूम होगा कि इस्लाम ने औरत को जो राइट्स दिए हैं वह मौजूदा तक़ाज़ों से पूरी तर मैच करते हैं! दीनी सिस्टम ही में वीमेन राइट्स महफ़ूज़ रह सकते हैं।

जायदाद रख सकती है, एजुकेटेड हो सकती है यानी सभी कुछ कर सकती है। इसकी मिसालें हमारे सामने मौजूद हैं। अगर इस्लाम ने औरत के साथ नाइन्साफ़ी की होती तो उन औरतों को ये मुक़ाम न मिलता।

वेस्टर्न समाज या उस से डरे हुए मुसलमान ये मुतालबा करते हैं कि औरतों को राइट्स दिए जाएं लेकिन ख़ुद इस समाज ने औरतों को क्या दिया?

आर्ट और कल्चर के ख़ूबसूरत पर्दों के पीछे औरत का इतना एक्सप्लॉएटेशन किया गया कि वह मर्दों के हाथों खिलौना बन कर रह गई।

इस्लाम, औरत को औरत ही रहने देते हुए उन तमाम जायज़ कामों की इजाज़त देता है जो मर्दों को हासिल हैं और कोई चीज़ उसकी तरक़्क़ी में आड़े नहीं आने देता।

औरत एजुकेशन में मर्दों से भी आगे जा सकती है लेकिन उन्हीं हदों में रहते हुए जो अल्लाह ने उसके लिए तय कर दी हैं।

कुछ जगहों पर मुस्लिम समाज ख़ुद भी क़ुसूरवार है कि वह औरत को उसका जाएज़ हक़ नहीं देता और ये सिर्फ़ क़ुरआनो-सुन्नत से दूरी का नतीजा है।

क़ुरआन और सुन्नत में दिए गए राइट्स को ग़ोर से पढ़ें तो मालूम होगा कि इस्लाम ने औरत को जो राइट्स दिए हैं वह मौजूदा तक़ाज़ों से पूरी तर मैच करते हैं!

दीनी सिस्टम ही में वीमेन राइट्स सेक्योर रह सकते हैं। दीन इन्सानियत के लिए इज़्ज़त, विक़ार और राइट्स की हिफ़ाज़त का पैग़ाम लेकर आया। दीन से पहले समाज का हर कमज़ोर तबक़ा ताक़तवर के आगे झुका हुआ था और समाज में औरतों की हालत सबसे ज़्यादा ख़राब थी। इन्सानी तारीख़ में औरत और इज़्ज़त दो मुख़तलिफ़ हक़ीक़तें रही हैं। पुराने युनानी स्कूल ऑफ़ थॉट से हालिया वेस्टर्न स्कूल ऑफ़ थॉट तक ये सिलसिला क़ायम नज़र आता है। यूनानी रिवायात के मुताबिक़ पेंडोरा एक औरत ही थी जिसने उस सन्दूक़ को खोलकर इन्सानियत को ताऊन और ग़मों का शिकार बना दिया था जिसे खोलना मना था। शुरुआती रोमन क़ानून में भी औरत को मर्द से कम बताया गया था। शुरु की ईसाई सोच भी इसी तरह की थी।

सेंट जेरोम ने कभी कहा था, "औरत बुराईयों की जड़, गुनाहों का रास्ता और सांप का डंक है खुलासा ये है कि एक बहुत ख़तरनाक चीज़ है।"

पश्चिमी दुनिया में औरत को अपने राइट्स के लिए एक लम्बी और मेहनत भरी जिद्दोजेहद से गुज़रना पड़ा। वीमेन राइट्स के लिए जिद्दोजेहद करने वाली औरतों में अमेरिका की सुसान बी एंथनी (1820-1906) का नाम नुमायाँ है जिन्होंने नेश्नल वीमेनस सफ़रेज एसोसिएशन बनाई थी जिन्हें 1872 में सिर्फ़ इस जुर्म की सज़ा में जेल जाना पड़ा कि उनहोंने प्रेसिडेंशल इलेक्शन में वोट का हक़ इस्तेमाल करने की कोशिश की थी।

सदियों की कोशिशों के बाद 1961 में अमेरिकी प्रेसिडेंट जॉन केनेडी ने वीमेन राइट्स के लिए एक कमीशन बनाया जिसकी सिफ़ारिश पर पहली बार औरतों के लिए एफ़ोर्डेबिल चॉइल्ड केयर और लीव प्रेक्टिसेस की मन्जूरी दी गई। सियासी मैदान में भी औरतों की कामयाबी लम्बी कोशिशों के बाद मुमकिन हुई। जेनेट रेंकिन ऑफ़ मोंटेना पहली बार 1917 में अमेरिकी सिनेटर बन सकीं।

जबकि इस्लाम की वीमेन राइट्स की तारीख़, दरख़शाँ रिवायात को पेश करती है। पहले ही दिन से इस्लाम ने औरत के मज़हबी, समाजी, क़ानूनी, सियासी और इन्तेज़ामी रोल को न सिर्फ़ माना बल्कि उसके सारे राइट्स की ज़मानत भी ली। वैसे ये एक अफ़सोस की बात है कि आज वेस्टर्न राइटर्स और थिंकर्स जब भी वीमेन राइट्स की तारीख़ तैयार करते हैं तो इस बारे में इस्लाम के तारीख़ी और बेमिसाल रोल से बिल्कुल बचते हुए उसे नज़रअन्दाज़ कर देते हैं।

वीमेन राइट्स, आज का टेढ़ा मसला

वीमेन राइट्स जो कि आज की दुनिया का एक बहुत ही टेढ़ा मसला बन चुका है, इसके बारे में बहुत से आर्टिकिलस लिखे गए, किताबें लिखी गईं, तक़रीरें की गईं और बहुत सी कान्फ्रेंसें हुईं हैं। जब हम इस दुनिया के इन्सानी नक़्शे और मुख़तलिफ़ इन्सानी समाजों पर नज़र डालते हैं, जिनमें सिविलाइज़्ड और माडर्न सोसाइटीज़ भी शामिल हैं, तो हम देखते हैं कि इन सारी सोसाइटीज़ में वीमेन राइट्स का मसला अभी तक हल नहीं हुआ है। ये सब इन्सानी इश्युज़ के बारे में हमारी ग़लत सोच की निशानी है और इस बात का एलान है कि हम इन इश्युज़ में तंगनज़री का शिकार हैं।

ऐसा लगता है कि इन्सान अपने सारे बुलन्दबांग दावों, मुख़लिस और हमदर्द लोगों की सारी कोशिशों, वीमेन राइट्स और औरतों के इश्युज़ के बारे में दुनिया भर में होने वाली कल्चरल सरगर्मियों के बावजूद औरतों के राइट्स के बारे में एक सीधे रास्ते और सही सिस्टम को अभी तक ढूंढ नहीं पाया है। दूसरे लफ़्ज़ों में ज़ुल्म, ज़्यादती, कजफ़िक्री, एक्सप्लॉएटेशन, फ़ैमिली मुश्किलें, मर्द-औरत के आपसी रिलेशन और ज़्यादती से जुड़े इश्युज़ अभी तक इन्सानियत के हल न होने वाले इश्युज़ में से हैं।

यानी साइंसी तरक़्क़ी, आसमानों और कहकशाओं के चक्कर और समन्दरों की गहराईयों में न जाने क्या-क्या तलाश करने, ज़ेहनी उलझनों की गुत्थियों को सुलझाने और समाजी और फ़ाइनेंशल इश्युज़ में अपनी सारी हैरान कर देने वाली तरक़्क़ी के बावजूद ये इन्सान अभी तक इस एक मसले में सर खुजाता हुआ नज़र आता है।

WOMEN
FREEDOM
WOMEN
RIGHTS

हैदराबादी डिश

चिकन 65

बग़ैर हड्डी का चिकन.....1किलो
अदरक पॉवडर.....एक चम्मच
सोंफ़ पिसी.....एक चम्मच
लहसुन पॉवडर.....एक चम्मच
अंडे की ज़र्दी.....1
मकई का आटा.....2 चम्मच
आटा.....1/4 चम्मच
पिसा ज़ीरा.....1/2 चम्मच
नमक.....1/2 चम्मच
हरी मिर्च.....2
कड़ी पत्ता.....5
प्याज़
फ़्राई करने के लिए तेल

मिलाने के लिए:

1 कप गाढ़ा दही
एक चम्मच पिसी मिर्च
एक चम्मच गर्म मसाला
1/2 चम्मच हल्दी

तरीक़ा:

अंडा की ज़र्दी, आटा, ज़ीरा, अदरक, लहसुन, सोंफ़, नमक, मकई का आटा, इन सब को खूब गाढ़ा करके फैंट लीजिए।

उसके बाद चिकन के छोट-छोटे पीस बना लीजिए। फिर इन पीसों का पानी निचोड़ कर उन्हें इसे मसाले में अच्छी तरह मिला लीजिए। मिलाने के बाद इसे दो घंटे के लिए फ्रिज मे रख के छोड़ दीजिए।

उसके बाद तेल खूब गर्म करके चिकन के टुकड़ों को अच्छी तरह तल लीजिए।

अब एक दूसरे बतर्न में तेल गर्म कीजिए और कड़ी पत्ता और बीच से कटी हरी मिर्चों को भी तल लीजिए। इस बीच दूसरी लिस्ट से दही, हल्दी, गर्म मसाले और पिसी मिर्च को भी एक अलग बतर्न में अच्छी तरह मिला लें। जैसे ही हरी मिर्च तल जाए उसे दही वाले इस मसाले में क़ाएदे से मिला दीजिए। इसके बाद इसे हल्की आंच पर रख दें। जैसे ही खौलना शुरू हो जाए, तले हुए चिकन के पीसों कों इसमें डाल दीजिए और तब तक पकने दीजिए जब तक तेल अलग न हो जाए।

ज़ाएक़ेदार हैदराबादी चिकन 65 तैयार है।

Recipe

ग़लती किसकी है मर्द की या औरत की या दोनों की?

■ आयतुल्लाह ख़ामेनई

औरतों पर ज़ुल्म का अस्ली फ़ैक्टर

ये एक सच्चाई है कि पूरी तारीख़ में और हर समाज में औरत पर ज़ुल्म हुआ है और ये ज़ुल्म, इन्सान की जिहालत की वजह से सामने आता है। इस जाहिल इन्सान का नेचर और मिज़ाज ये है कि जहाँ भी उसके सर पर कोई ज़ोर ज़बरदस्ती करने वाला न हो या ख़ुद उसका ईमान मज़बूत न हो या उसके सर पर कोई तलवार या क़ानून का डंडा न लटक रहा हो तो आमतौर पर होता ये है कि ताक़तवर, कमज़ोर पर ज़ुल्म करने लगता है।

घर की अस्ली मालिक औरत है

औरत अक़्ल के लिहाज़ से मर्दों से कमज़ोर बिल्कुल नहीं होती है बल्कि कभी कभी तो वह अक़्ल में मर्दों से आगे भी निकल जाती है। वैसे औरतों के सोचने का अन्दाज़, मर्दों के अन्दाज़ से अलग होता है और दोनों के एहसासात और जज़बात में भी फ़र्क़ होता है क्योंकि दोनों के एहसासात और जज़बात उनके अपने अपने ख़ास कामों के लिए बनाए गए हैं। लेकिन कुछ जगहें ऐसी भी हैं जहां इन दोनों के सोचने के अन्दाज़ में किसी तरह का फ़र्क़ नहीं होता है जैसे लिट्रेरी मामले लेकिन ज़िन्दगी को चलाने और इसकी भागदौड़ में आगे बढ़ने की जहां तक बात है, इन दोनों की सोच अलग-अलग होती है।

मैंने बहुत बार अपनी बुज़ुर्ग और बड़ी औरतों से सुना है और सही सुना है कि वह कहती हैं कि *'मर्द एक बच्चे की तरह होते हैं'* और ये हक़ीक़त भी है। एक समझदार मर्द भी चाहे ज़ेहनी तौर पर सही हो, फिर भी अपने घर में अपनी बीवी के साथ ज़िन्दगी गुज़ारने में बिल्कुल एक बच्चे की तरह होता है और बीवी उस बच्चे की माँ की तरह जिसके खाने में अगर थोड़ी सी भी देर हो जाए तो वह रोने चिल्लाने लगता है। इसलिए उसे किसी भी तरह समझा कर चुप कराया जाता है वरना वह ज़िद करने लगता है। अब अगर एक औरत अपनी महारत से इन कामों को सही से कर ले जाए तो एक मर्द उसके हाथों आसानी से क़ाबू में आ सकता है।

यहां मेरा मतलब मर्दों को बच्चा साबित करना नहीं है। अब इसके लिए क्या किया जाए कि सच वही है जो अभी बयान किया है। वैसे मेरे कहने का असली मतलब ये है कि मर्द और औरत दोनों की ज़ेहनियत और सोचने का अन्दाज़ अलग-अलग होता है। औरत की मैच्योरिटी और महारत उसकी अपनी एक्टिविटीज़ में उसके काम आती है यानी एक औरत घर की चार दीवारी में ये समझती है कि मर्द एक बच्चे की तरह है, इसलिए उसका खाना वक़्त पर तैयार करना चाहिए ताकि वह भूका न रहे वरना वह चिड़चिड़ा हो जाएगा या मान लीजिए कि मर्द किसी बात पर एतेराज़ करता है और उसका पूरा ज़ोर इस बात पर है कि एतेराज़ इस तरह दूर किया जाए कि वह पूरी तरह से मुतमइन हो जाए। समझदार और मैच्योर औरतें पूरी महारत से ये काम अन्जाम देती हैं और मर्द की चाल-ढाल, अन्दाज़ और ज़ेहन को पूरी तरह

कन्ट्रोल में रखती हैं। इसी बुनियाद पर कहा जा सकता है कि घर में असली मालिक औरत होती है जबकि देखने में लगता है कि मर्द मालिक है क्योंकि वह भारी आवाज़, मज़बूत जिस्म और लम्बे क़द काठी वाला होता है।

ख़ुलासा ये हुआ कि कुछ औरतों की अक़्ल मर्दों से ज़्यादा होती है या कम से कम वह तफ़क्कुर, इल्म और एहसासात वग़ैरा में मर्द जैसी होती हैं। लेकिन औरत का जिस्म आमतौर पर मर्द से कमज़ोर होता है। बुनियादी बात यही है। मान लीजिए कि एक अक़लमन्द इन्सान, एक बदमाश के साथ हो और उनमें से किसी एक को पानी पीना हो और पानी का एक ही ग्लास मौजूद हो। उसूली तौर पर जिसकी ताक़त ज़्यादा होगी वह पानी पी जाएगा या ये कि किसी तरह उसे धोखा देकर पानी का ग्लास उस से छीन लिया जाए। तारीख़ में हमेशा से यही होता रहा है। मर्द अपने लम्बे क़द-काठी, भारी आवाज़ और मज़बूत जिस्म की वजह से औरतों पर ज़ुल्म करते रहे हैं क्योंकि वह नाज़ुक बदन, नर्म लबो लहजे, आमतौर पर छोटे क़द और कमज़ोर जिस्म वाली होती हैं। ये एक हक़ीक़त है। मेरी अपनी नज़र में अगर आप इस बात की तह तक पहुँचें और तहक़ीक़ करें तो आप इस मुक़ाम पर पहुँचेंगी कि सारे ज़ुल्मो-सितम की जड़ यही है।

मेरी बहनो और बेटियो! मुझे यक़ीन है कि इस्लामी समाज के किसी हिस्से में भी चाहे वह दुनिया में कहीं भी हो, अगर मुसलमान औरतों के बारे में कोई कमी नज़र आती है तो इसमें जहां मर्द क़ुसूरवार हैं वहीं थोड़ी बहुत ख़ुद औरतें भी क़ुसूरवार हैं क्योंकि जिस किसी को सबसे पहले औरतों की इस्लामी हैसियत और मुक़ाम को पहचानना चाहिए, वह ख़ुद औरतें हैं। उन्हें जानना चाहिए कि ख़ुदा, क़ुरआन और इस्लाम ने उनके लिए क्या अहकाम जारी किए हैं, उन अहकामात के ज़रिए औरतों से इस्लाम क्या चाहता है और उनकी ज़िम्मेदारियों और फ़रीज़ों को कौन तय करेगा?

औरतों को ये ज़रूर मालूम होना चाहिए कि उनके लिए इस्लाम क्या सौग़ात लेकर आया है, इस्लाम उनसे क्या चाहता है, वह अपने राइट्स का बचाव कैसे कर सकती हैं और उनको कैसे ले सकती हैं।

अगर उन्होंने ये सब नहीं किया तो वह लोग जो किसी भी इन्सानी वेल्यु और अख़लाक़ी हद बन्दियों के पाबन्द नहीं हैं वह ख़ामोशी के साथ औरतों पर ज़ुल्मों-सितम को फैलाने वाले दुनियावी सिस्टम्स जैसे सोशलिज़्म, कम्युनिज़्म,

कैपिटलिज़्म, फेमिनिज़्म के बताए रास्ते पर चलकर औरतों को अपनी उंगलियों पर नचाते रहेंगे। जैसा कि आज पश्चिमी दुनिया में हो रहा है कि औरतों के लिए लगाए जाने वाले ज़ाहिरी ख़ूबसूरत नारों के बावजूद सबसे ज़्यादा ज़ुल्म पश्चिमी मर्द ही अपनी औरतों पर कर रहे हैं। बाप अपनी बेटी पर, भाई अपनी बहन पर और शौहर अपनी बीवी पर!

दिए गए आंकड़ों के मुताबिक़ दुनिया में औरतों, बीवियों, बहनों यहाँ तक कि बेटियों पर सबसे ज़्यादा ज़ुल्मो-सितम, उनकी आबरूरेज़ी और उनके राइट्स की पामाली उन लोगों की तरफ़ से होती है जो वेस्टर्न लाइफ़ सिस्टम्स के तहत ज़िन्दगी बसर कर रहे हैं यानी अगर किसी समाजी सिस्टम में रूहानी वेल्युज़ न पाई जाएं और ख़ुदा का वुजूद दिलों में न हो तो मर्द अपनी जिस्मानी ताक़त पर अकड़ते हुए औरतों पर ज़ुल्मो-सितम के रास्तों को अपने लिए पूरी तरह खुला हुआ पाएंगे।

औरतों पर ज़ुल्म के रास्ते में दो रुकावटें

दो चीज़ें औरतों पर ज़ुल्मो-सितम की राह में रूकावट बन सकती हैं। एक ख़ुदा पर ईमान और दूसरी ख़ुद औरतें जो अपने इन्सानी और ख़ुदाई राइट्स को अच्छी तरह पहचानें और उनकी हिफ़ाज़त करें और उन्हें हासिल करने की भरपूर कोशिश करें। इस सिलसिले में दीन एक बीच के रास्ते की पहचान कराता है और वह ये कि न तो ख़ुद औरत को ज़ुल्म करने की इजाज़त देता है और न ही मर्द और औरत के मिज़ाज और नेचर को नज़रअन्दाज़ करता है। सही और सीधा रास्ता वही दीन का पहचनवाया रास्ता है। जो समाज अपनी औरतों की हैसियत और इज़्ज़त को बर्बाद करे और जहाँ औरत जैसी अज़ीम हस्ती एक खिलौने से ज़्यादा की हैसियत न रखती हो तो वह समाज हक़ीक़त में ग़ैरों का समाज तो हो सकता है, उसे अपना कहना ठीक नहीं है।

■ ताहेरा क़ासिम अली

ज़िम्मेदारी का एहसास

माँ की ज़िम्मेदारियाँ ही उसका कॅरियर हैं और जो औरतें इस कॅरियर को अपनाती हैं उन्हें इसमें कामयाब होने की पूरी कोशिश करना चाहिए। ये हर माँ की ज़िम्मेदारी है कि वह पैरेंन्टिंग की ज़िम्मेदारी को अच्छी तरह पूरा करने के लिए हमेशा नए-नए तरीक़ों की तलाश में रहे। इन तरीक़ों को पढ़ने से माँ को ज़्यादा मालूमात मिलती रहती हैं। जब वह दूसरी माँओं को पेश आने वाली मुश्किलों के बारे में पढ़ती है तो उसे ये सच्चाई जानकर बहुत सुकून होता है कि वह अकेली नहीं है और उसके जैसी मुश्किलें दुनिया में दूसरी माओं के सामने भी आती हैं। क्योंकि बहुत से माँ-बाप ये सोच कर परेशान रहते हैं कि बच्चों की परवरिश में सिर्फ़ उनको ही ये मुश्किलें पेश आ रही हैं। इसके अलावा दूसरों के आज़माए हुए तरीक़ों और सॅलुशन्ज़ या किसी साइक्लोजिस्ट के मश्वरों पर चलकर बहुत सी मुश्किलें आसानी से हल की जा सकती हैं।

बच्चों को समझाकर बताना

हर माँ को ये बात मालूम होना चाहिए कि वह अपने बच्चों को ये ज़रूर बताए कि उसे उनसे क्या-क्या उम्मीदें हैं। सिर्फ़ अच्छे बच्चों की उम्मीद और तमन्ना करना ही काफ़ी नहीं है। बच्चों को ये बात मालूम होना चाहिए कि उनसे क्या उम्मीदें लगाई जा रही हैं और उनकी माँ उनसे क्या चाहती है। कभी-कभी माँ अपने बच्चे से कहती है कि वह कुर्सी को सही तरह से रख दे लेकिन उसके सामने इस बात की एक्सप्लेन नहीं करती है कि कुर्सी को किस तरह रखना है। बच्चा जिस तरह सही समझता है उसी तरह कुर्सी को रख देता है। हो सकता है कि बच्चे को कुर्सी सही तरह से न रखने के लिए बेवक़ूफ़ और काहिल भी कहा जाए। अगर बच्चा जानता होता कि उससे एक्ज़ेक्टली क्या कहा गया है तो शायद उसकी उलझन और परेशानी को दूर किया जा सकता था। मतलब ये है कि बच्चे से जो कुछ भी कहा जाए, समझाकर कहा जाए। ये सिर्फ़ एक मिसाल थी लेकिन यही फ़ार्मूला हर जगह काम आ सकता है चाहे वह उसकी पढ़ाई हो या कॅरियर या कोई और चीज़। माँ को हर मैदान में अपनी उम्मीदों को बच्चे के सामने समझाकर बयान कर देना चाहिए।

बच्चों की सलाहियत के हिसाब से उनकी हिम्मत बढ़ाना

हर बच्चे की अपनी एक सलाहियत और क्वालिटी होती है। पैग़म्बर(स॰) ने फ़रमाया है, ''इन्सान सोने और चाँदी की कानों की तरह हैं।''

बच्चों के अन्दर बहुत सी ऐसी सलाहियतें होती हैं जो उन्हें बहुत ऊँची मंज़िलों तक ले जा सकती हैं। बच्चे किसी न किसी फ़ील्ड में अपनी सलाहियत और दिलचस्पी दिखाते हैं। बच्चों का एक दूसरे से मुक़ाबला करना और उनकी आपस में एक दूसरे के साथ कम्पेयर करने के बजाए ये जानना हर अच्छी माँ की ज़िम्मेदारी है कि उसका बच्चा किस मैदान में ज़्यादा दिलचस्पी रखता है और उसके अन्दर किस फ़ील्ड में आगे बढ़ने की सलाहियत है। फिर वह उसी मैदान में अपने बच्चे की सलाहियत बढ़ाने की कोशिश करे और उसकी कमज़ोरियों को दूर करे। अगर कोई बच्चा बहुत शर्मीला है तो अब माँ को उसके पीछे नहीं पड़ जाना चाहिए कि वह भी अपने दूसरे भाई-बहनों की तरह लोगों के साथ मिले-जुले। कभी-कभी ख़ुद माएं अपने बच्चों से हद से ज़्यादा डिमांड करके उन्हें और शर्मीला बना देती हैं। बच्चे को ये सिखाना चाहिए कि वह किस तरह अपने शर्मीलेपन पर क़ाबू पा सकता है। इस मुश्किल को हल करने में शर्मीलेपन के बारे में कुछ किताबें काम आ सकती हैं या माँ को कुछ प्रेक्टिकल तरीक़े बताने चाहिएं कि वह किस तरह अपना शर्मीलापन दूर करे, दूसरों से मिलेजुले और उनसे बात करे। माँ की अच्छी हिदायतें बच्चे की बहुत सी कमज़ोरियों का इलाज कर सकती हैं।

इमाम सादिक़(अ॰) फ़रमाते हैं, ''ख़ुशनसीब है वह बच्चा जिसकी माँ अच्छे कैरेक्टर और अच्छे अख़लाक़ वाली हो।''

अच्छी माँ की क्वालिटीज़

माँ का ख़्वाब

अल्लामा इक़्बाल

मैं सोई जो एक शब तो देखा ये ख़्वाब
बढ़ा और जिस से मेरा इज़्तेराब।
ये देखा कि मैं जा रही हूँ कहीं
अंधेरा है और राह मिलती नहीं।
लरज़ता था डर से मेरा बाल-बाल
क़दम का था दहशत से उठना मुहाल।
जो कुछ हौसला पा के आगे बढ़ी
तो देखा क़तार एक लड़कों की थी।
ज़मर्रूद सी पोशाक पहने हुए
दिए सबके हाथों में जलते हुए।
वह चुप-चाप थे आगे पीछे रवाँ
ख़ुदा जाने जाना था उनको कहाँ।
इसी सोच में थी कि मेरा पिसर
मुझे इस जमाअत में आया नज़र।
वह पीछे था और तेज़ चलता न था
दिया उसके हाथों में जलता न था।
कहा मैंने पहचान कर, मेरी जाँ
मुझे छोड़कर आ गए तुम कहाँ?
जुदाई में रहती हूँ मैं बेक़रार
पिरोती हूँ हर रोज़ अशकों के हार।
न परवा हमारी ज़रा तुम ने की
गए छोड़, अच्छी वफ़ा तुम ने की।
जो बच्चे ने देखा मेरा पेचो-ताब
दिया उसने मुँह फेर कर यूँ जवाब।
रुलाती है तुझको जुदाई मेरी
नहीं इसमें कुछ भी भलाई मेरी।
ये कह कर वह कुछ देर तक चुप रहा
दिया फिर दिखा कर ये कहने लगा।
समझती है तू हो गया क्या इसे?
तेरे आँसुओं ने बुझाया उसे।

अल्लामा इक़्बाल ने ज़िन्दगी को बहुत क़रीब से देखा था। आपकी ये नज़्म भी एक ऐसी माँ की मुहब्बत को बयान कर रही है जो बेटे को अपनी नज़रों से ओझल नहीं होने देना चाहती। जिसकी वजह से उसका बेटा ज़िन्दगी की दौड़ में पीछे रह गया है और अपनी नाकामी की वजह अपनी माँ की बेजा मुहब्बत और उसके आंसुओं को समझ कर माँ से नाराज़ है।

अल्लामा इक़्बाल इस नज़्म में ये पैग़ाम देना चाहते हैं कि एक डेवलेप्ड सोसाइटी तभी वुजूद में आ सकती है जब माँ अपने दिल पर पत्थर रखकर अपने दिल के टुकड़े को ऊचाईयां छूने और आगे बढ़ने की इजाज़त दे दे ताकि क़ौम का सर बुलंद हो सके।

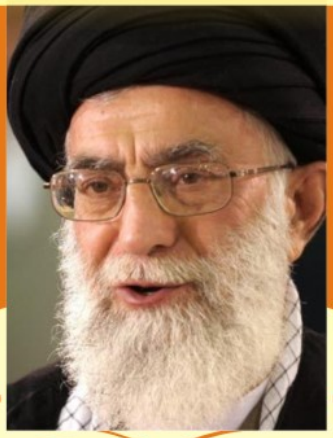

मम्मी से कुछ बातें

तक़्लीद पर...

आज शाम की चाय पीने के बाद मैं बैठी यूँ ही अख़बार देख रही थी कि मम्मी आ गईं और पता नहीं कहाँ-कहाँ की बातें होने लगीं। बातों-बातों में बात तक़्लीद की तरफ़ चली गई। तक़्लीद कभी भी मेरे हलक़ से नही उतरी थी। मेरा मानना था कि जब क़ुरआन और हदीसें हमारे सामने मौजूद हैं तो हमें तकलीद की किया ज़रुरत है। मम्मी कहने लगीं कि अगर तक़्लीद पर बात करना चाहती हो तो बहस शुरु करने से पहले मैं तुम्हें कुछ बातें बताना चाहूँगी।

पहली बात

सबसे पहली बात तो ये है कि तक़्लीद किसी मसले में किसी मुजतहिद की तरफ़ रुजू करने को कहते हैं यानी वह जिस काम को करने की राय दे तो उसको किया जाए और जिस चीज़ से बचने की राय दे उस से बचा जाए। दूसरे लफ़्ज़ों में यूँ कहा जाए कि तुम्हारे अमल का ज़िम्मेदार वही है, इस तरह कि क़यामत में वही ख़ुदा के सामने तुम्हारे अमल का जवाब देने वाला होगा।

जैसे ही मम्मी रूकीं मैंने फ़ौरन सवाल जड़ दिया कि हम किसी की तक़्लीद करें ही क्यों?

मम्मी बोलीं, "ख़ुदा ने हमारे लिए शरीअत नाज़िल की है जिसमें वाजिब कामों को करने का हुक्म दिया गया है और हराम कामों से बचने को ज़रूरी बताया गया है इसमें कुछ चीज़ें ऐसी हैं जो तुम्हारे लिए ऐसे साफ़ हैं कि तुम उनको अपनी रोज़ाना की सोशल ज़िन्दगी में ख़ुद से ही तय कर सकती हो। इस्लामी शरीअत ने तुम्हारी ज़िन्दगी के तमाम पहलुओं को जमा कर लिया है यानी हर चीज़ के लिए एक हुक्म बता दिया है। अब सवाल ये है कि तुम किसी मसले में उसके हुक्म को किस तरह पहचानोगी? कैसे मालूम होगा कि ये काम जायज़ है और ये नाजायज़। ज़रा सोचो! क्या तुम अपने सारे कामों में शरई हुक्म को तलाश कर सकती हो?"

"हाँ-हाँ, क्यों नहीं?"

"नहीं बेटा! तुम्हारे ज़माने और इस्लामी शरीअत के आने के ज़माने में बहुत ज़्यादा फ़ासला है और इस बीच झूठी हदीसें गढ़ने वालों ने अपनी बहुत सी मनगढ़त हदीसों को हमारी बुनियादी हदीसों में मिला दिया है। साथ ही जिन लोगों ने हदीसें बयान की हैं उनके बारे में भी पता होना चाहिए कि कौन सच्चा था और कौन झूठा। ये भी पता होना चाहिए कि मासूम ने कौनसी हदीस किस सूरत और किस मसले में बयान फ़रमाई है। दूसरी तरफ़ क़ुरआन है जिसको समझने के लिए सबसे पहले तो अरबी आना चाहिए और फिर अगर अरबी ज़ुबान सीख भी ली तो क़ुरआन को समझना इतना आसान तो है नहीं। इसके लिए तफ़्सीर की किताबों को खंगालना पड़ेगा जो ख़ुद एक बड़ा काम है। इन सब की वजह से शरई हुक्म मालूम करना बहुत मुश्किल काम है।"

"फिर मैं क्या करूँ और कैसे दीनी अहकाम पर अमल करूँ?"

"बेटा! इसका सबसे आसान रास्ता ये है कि तुम इसके लिए इस्लामी मसायल के एक्सपर्टस यानी फ़क़ीहों और मुजतहिदों से अपने दीनी अहकाम मालूम करो और इसी को तक़्लीद कहते हैं। सिर्फ़ फ़िक़्ह ही में नहीं बल्कि हर इल्म में ऐसा ही होता है। साइंस में आए दिन जो कुछ भी हमें नया देखने और सुनने को मिलता है इसकी वजह यही है कि कुछ ऐसे लोग हैं जो साइंस में स्पेशलिस्ट हैं।

हर इल्म और फ़न में उसका एक माहिर और स्पेशलिस्ट होता है, जब भी हमें कोई मुश्किल पेश आती है या ज़रूरत होती है तो हम उसके माहिर से कांटेक्ट करते हैं।"

मम्मी ने कहा, "इसकी सबसे अच्छी मिसाल मेडिकल साइंस है। अगर तुम मरीज़ हो जाओ, ख़ुदा सलामत रखे, तो क्या करोगी?"

"मैं डाक्टर के पास जाऊँगी और उस से अपनी हालत बताऊँगी ताकि वह मेरी बीमारी को समझने के बाद मुझे दवाई लिख दे।"

"मेरा सवाल ये है कि तुम ख़ुद ही क्यों अपनी बीमारी को समझकर दवाई नहीं ले लेतीं?"

"मैं कोई डाक्टर तो हूँ नहीं।"

"बस इसी तरह अहकाम का भी यही हाल है। तुमको एक ऐसे मुजतहिद से कांटेक्ट करना ही पड़ेगा जो ख़ुदा के बताए हुए जायज़ और नाजायज़ को अच्छी तरह पहचानता हो। तुम्हारा अपनी शरई मुश्किल को उसके सामने बयान करना ऐसा ही है जैसे कि तुम अपनी बीमारी की हालत को बयान करने के लिए एक माहिर डाक्टर के पास जाती हो। बात साफ़ है कि जिस तरह तुम डाक्टर के स्पेशलिस्ट होने की वजह से उस फ़न में उसकी तक़्लीद की मोहताज हो उसी तरह अहकाम के मख़सूस फ़न में एक मुजतहिद की तक़्लीद की भी मोहताज हो।"

"जिस तरह तुम एक डाक्टर के बारे में जानने की पूरी कोशिश करती हो कि किस चीज़ का स्पेशलिस्ट है, तजुर्बेकार है कि नहीं, इसी तरह ये भी ज़रूरी है कि एक मुजतहिद के बारे में भी जानने की कोशिश करो कि वह अपने फ़न में माहिर है कि नहीं ताकि उसकी तक़्लीद कर सको और उससे अपने शरई मसाएल में हुक्म मालूम कर सको।"

अच्छा कैसे पहचानूँगी कि ये शख़्स मुजतहिद है नहीं या ये दूसरे मुजतहिदों में सबसे बड़ा आलिम है?" इस सवाल पर मम्मी ने जवाब देते हुए कहा, "अच्छा! एक सवाल का जवाब दो! तुम कैसे पहचानोगी के ये डाक्टर स्पेशलिस्ट है या दूसरे डाक्टरों में सबसे अच्छा है?"

मैंने कहा, "इसके लिए मैं ये करूँगी कि जो लोग डाक्टरों के बारे में ज़्यादा जानते हैं या जो उसमें तजुर्बेकार हैं, उनसे मालूम करूँगी या जो डॉक्टर ज़्यादा मशहूर होगा उसके पास चली जाऊँगी।"

"बात साफ़ है, इसी उसूल के तहत तुम सबसे बड़े मुजतहिद और मरजा को भी पहचान लोगी।" मम्मी ने कहा।

"अच्छा! क्या जिसकी तक़लीद हम पर वाजिब है उसकी शख़सियत के मालूम हो जाने के बाद कोई और शर्त भी है जिसका जानना ज़रूरी हो?" मैंने सवाल किया।

"हाँ! क्यों नहीं। तुम जिसकी तक़लीद करती हो उसे मर्द, बालिग़, आक़िल, मोमिन, आदिल, ज़िन्दा और हलालज़ादा होना चाहिए। अगर ऐसा नहीं है तो फिर उसमें ग़लतियाँ ज़्यादा पाई जाएंगी।"

"बहुत अच्छा! मैंने मुजतहिद और तक़लीद को किसी हद तक समझ लिया है। अब मेरे ऊपर क्या-क्या चीज़ें वाजिब है और मुझे क्या-क्या करना है?"

"तुम्हारे ज़माने में जो मुजतहिद, आलम हो यानी सबसे ज़्यादा जानने वाला हो, उसकी तक़लीद करो और वह जो भी फ़तवा दे उस पर अमल करो जैसे वुज़ू, ग़ुस्ल, तयम्मुम, नमाज़, रोज़ा, हज, ख़ुम्स, ज़कात वग़ैरा में जो भी फ़तवा दे उस पर अमल करो। इसी तरह कोई चीज़ बेचना, ख़रीदना, शादी-बियाह, खेती-बाड़ी, वसिय्यत, वक़्फ़ वग़ैरा के अहकाम में भी उसके फ़तवों पर ही अमल करना पड़ेगा।"

अभी मम्मी की बात ख़त्म ही हुई थी कि मैंने अगला सवाल कर लिया कि क्या ख़ुदा, नबियों, रसूलों और इमामों पर ईमान वग़ैरा में भी तक़लीद करना चाहिए?

"बिल्कुल नहीं! अल्लाह, तौहीद, हमारे आख़िरी नबी की नुबुव्वत और बारह इमामों की इमामत और क़यामत पर ईमान में तक़लीद नहीं की जा सकती। जिन चीज़ों के बारे में तुम सवाल कर रही हो उन्हें उसूले दीन कहते हैं और उसूले दीन में ज़रूरी है कि हर मुसलमान अपनी अक़्ल इस्तेमाल करके इन्हें समझे और इन पर उसका पूरा-पूरा ईमान हो।"

इसके बाद मैंने कहा, "मम्मी अब एक सवाल और रह जाता है और वह ये कि शरई मसलों में अपने मुजतहिद के फ़तवों को किस तरह समझ पाऊँगी? वह कौन सा पैमाना है जिस पर मैं उसके फ़तवों को परख सकूँ? क्या मैं हर मसले में डॉएरेक्ट उसी मुजतहिद से रुजू करूँगी?"

"हाँ बेटा! अगर तुम ख़ुद उसके फ़तवों को उसी से पूछ सकती हो तो उसी से पूछ लो या फिर किसी ऐसे शख़्स से मालूम करो जो उसके फ़तवों को बयान करने में मोअ्तबर हो, अमानतदार हो और उसके फ़तवों की पूरी पहचान रखता हो या फिर उसकी तौज़ीहुल मसाएल में देख लो।"

आज की हमारी बात चीत जो गप-शप से शुरु हुई थी इतना अच्छा मोड़ ले लेगी, ये तो पता ही नहीं था आज मम्मी ने मेरी बर्सों की परेशनी दूर कर दी थी और अब मैं एसे मुजतहिद की तलाश में थी जो आलम हो और मैं उसकी तकलीद कर सकूं।

शैतान को पैदा ही क्यों किया है

■ आयतुल्लाह मकारिम शीराज़ी

सवालः अगर ख़ुदा ने इंसान को इबादत के ज़रिए कमाल तक पहुंचने के लिए पैदा किया है तो फिर शैतान को क्यों पैदा किया है?

जवाबः अगर हम ग़ौर करें तो हमारा ये दुश्मन ही हमारी कामयाबी में हमारा मददगार है। कहीं दूर जाने की ज़रूरत नहीं है। हमारे मुल्क का डिफ़ेंस करने वाली हमारी फ़ौज दुश्मन से मुक़ाबला करते वक़्त बहुत बहादुर और दिलेर बन जाती है और कामयाबी की मंज़िलों तक पहुंच जाती है।

ताक़तवर और तजुर्बेकार वही सिपाही होते हैं जो बड़ी-बड़ी जंगों में दुश्मन के सामने डट जाते हैं और घमसान की जंग लड़ते हैं। वही नेता ताक़तवर और तजुर्बेकार होते हैं जो बड़ी से बड़ी सियासी मुश्किलों में सख़्ती के साथ दुश्मन से मुक़ाबला करते हैं। नामी-गिरामी पहलवान वही होते हैं जो अपने सामने वाले पहलवान से जम के मुक़ाबला करते हैं।

इसी तरह ख़ुदा के नेक बंदे शैतान से हर रोज़ मुक़ाबला करते-करते दिन बदिन ताक़तवर और मज़बूत बनते चले जाते हैं।

आज के साइंटिस्ट इंसान के बदन में पाए जाने वाले कुछ बहुत ख़तरनाक बैक्टीरियाज़ के बारे में कहते हैं, "अगर ये न होते तो इंसान के सेल्स सुस्त और बेकार हो जाते और एक अंदाज़े के मुताबिक़ इंसान 80 cm से ज़्यादा न बढ़ पाता और हम सब बोने ही रह जाते।

लेकिन इसका ये मतलब नहीं है कि शैतान की ज़िम्मेदारी है कि वह ख़ुदा के बंदों को बहकाए। हक़ीक़त यही है कि इंसान और दूसरी हर चीज़ की तरह शैतान को भी ख़ुदा ने पाको-पाकीज़ा ही पैदा किया था, वह ख़ुद शैतान ही था जिसने अपने आप को शैतान बनाया था। इंसान के अन्दर गुमराही, और बुराईयां ख़ुद उसके अपने चाहने से पैदा होती हैं। लेकिन ग़ौर करने वाली बात ये है कि अपने शैतान होने के बावजूद शैतान ख़ुदा के नेक बंदों को न सिर्फ़ ये कि नुक़्सान नहीं पहुंचाता बल्कि ये तो उनकी तरक़्क़ी और कामयाबी का ज़ीना है।

हम यहां एक और बात कहेंगे कि दुनिया इम्तिहान की जगह है और हम ये भी जानते हैं कि इंसान की कामयाबी और तरक़्क़ी का एक फ़ैक्टर इम्तिहान भी होता है। साथ ही ये भी सच है कि इम्तिहान, बड़े दुश्मन और तूफ़ान से मुक़ाबला किए बग़ैर मुमकिन ही नहीं है।

वैसे अगर शैतान न होता तब भी इंसान के अपने नफ़्स के ज़रिए इंसान का इम्तिहान हो सकता था लेकिन शैतान के होने से इस तंदूर की आग और ज़्यादा भड़क गई है क्योंकि शैतान बाहर से बहकाने वाला है और इंसान का नफ़्स उसको अन्दर से बहकाता है।

यहाँ एक **सवाल** ये पैदा होता है कि ये कैसे हो सकता है कि ख़ुदा वंदे आलम ऐसे बेरहम और ताक़तवर दुश्मन के मुक़ाबले में हमें बिल्कुल अकेला छोड़ दे?

इस सवाल का **जवाब** हमें इस बात मिल जाएगा जिसे क़ुरआने मजीद ने भी बयान किया है कि ख़ुदा वंदे आलम मोमिनों के साथ फ़रिश्तों का एक लश्कर भेजता है और उन्हें ग़ैबी ताक़त अता करता है। इस लश्कर से मोमिनों को अपने सरकश नफ़्स से जंग करने और इस दुश्मन का मुक़ाबला करने में मदद मिलती है। इरशाद होता है, "बेशक जिन लोगों ने ये कहा कि अल्लाह हमारा रब है और इसी पर जमे रहे, उन पर फ़रिश्ते ये पैग़ाम लेकर आते हैं कि डरो नहीं और परेशान न हो... हम दुनिया की ज़िन्दगी में भी तुम्हारे साथी थे और आख़िरत में भी तुम्हारे साथी हैं।[1]

एक दूसरी ख़ास बात ये है कि शैतान कभी भी हमारे ऊपर अचानक हमला नहीं करता बल्कि वह जब भी हम पर हमला करता है उसी वक़्त करता है जब हम उसे छूट देते हैं। जी हाँ! जैसा कि क़ुरआन फ़रमाता है, "शैतान हरगिज़ उन लोगों पर क़ाबू नहीं पा सकता जो ईमान वाले हैं।[2]

हक़ीक़त ये है कि ये इंसान के आमाल ही होते हैं जो शैतान को उसके ऊपर कंट्रोल करने में मदद करते हैं। बहरहाल शैतान और उसके सिपाहियों के रंगा-रंग जाल और हथकंडों से बचने का सिफ़ एक ही रास्ता है और वह है ईमान, परहेज़गारी और ख़ुदा पर भरोसा। जैसा कि क़ुरआने करीम फ़रमाता है, "अगर तुम लोगों पर ख़ुदा का फ़ज़्ल और उसकी रहमत न होती तो कुछ लोगों के अलावा सब शैतान की पैरवी कर लेते।[3]

1-सूरए फ़ुस्सेलत/30-31, 2-सूरए नहल/99, 3-सूरए निसा/83

इमाम मुहम्मद तक़ी अ०

इमाम मुहम्मद तक़ी अ० अभी पाँच साल ही के थे कि आपके वालिद इमाम अली रज़ा अ० को अब्बासी सलतनत का वली अहद बना दिय गया था। जिसका मतलब ये हुआ कि अपने बचपने में ही आपने वह माहौल देखा जिसमें अगर चाहते तो आपके ऐशो-आराम में कोई कमी न रहती, मालो-दौलत क़दमों से लगा हुआ होता और दुनियावी शानो-शौकत आपके आगे-पीछे होती लेकिन ये घराना, आले मुहम्मद का घराना था जहाँ दुनिया की तरफ़ पलट कर देखा भी नहीं जाता। बहरहाल, इमाम रज़ा अ० मशहद में थे और आपके घर वाले सबके सब मदीने में थे। अभी इमाम तक़ी अ० आठ बरस के ही हुए थे कि इमाम रज़ा अ० की शहादत हो गई।

इमाम मुहम्मद तक़ी अ० ने अभी अपनी जवानी में क़दम भी नहीं रखा था कि आपकी बुलन्द सीरती और अच्छे अख़लाक़ की मिसालें और इल्मी कमाल के चर्चे चारों तरफ़ फैल गए थे। यहाँ तक कि इमाम रज़ा अ० की शहादत के बाद जैसे ही शाही दरबार में उस वक़्त के बड़े-बड़े उलमा से आपका मुनाज़ेरा हुआ तो सबको आपकी अज़मत और आपके इल्म के सामने सर झुकाना पड़ा। यहाँ तक कि इस मुनाज़ेरे के बाद उसी मजमे में मामून ने अपनी लड़की उम्मुल फ़ज़्ल का निकाह आपके साथ कर दिया था। ये कोई सिर्फ़ एक ऐतेक़ादी चीज़ नहीं है बल्कि तारीख़ का वह हिस्सा है जिसको सब मानते हैं।

ये उस वक़्त के ख़लीफ़ा 'मामून' की सियासत का एक नई तरह का सुनहरा जाल था जिसमें इमाम मुहम्मद तक़ी अ० की कमसिनी को देखते हुए मामून को कामयाबी की पूरी उम्मीद थी।

जैसा कि किताब "नवें इमाम" (इमामिया मिशन) में लिखा है, "बनी उमय्या के बादशाहों को आले रसूल की ज़ात से इतना इख़्तेलाफ़ न था जितना उनकी सिफ़ात से। वह हमेशा बस इसी कोशिश में रहते थे कि अख़लाक़ और इन्सानियत की बुलन्दी का वह मरकज़ जो मदीने में क़ायम है और जो सलतनत की दुनियावी हुकूमत के मुक़ाबले में एक रूहानियत का मरकज़ बना हुआ है, किसी तरह टूट जाए। इसीलिए वह घबरा-घबरा कर तरह-तरह की चालें चलते थे। इमाम हुसैन अ० से बैअत मांगना इसी की एक शक्ल थी और फिर इमाम रज़ा अ० को वली अहद बनाना भी इसी का एक दूसरा तरीक़ा था।"

सिर्फ़ ज़ाहिरी शक्ल में एक का अन्दाज़ जंग वाला और दूसरे का वली अहदी वाला था वरना दोनों बातों की अस्ल हक़ीक़त एक ही थी। जिस तरह इमाम हुसैन अ० ने बैअत नहीं की तो शहीद कर डाले गए उसी तरह इमाम अला रज़ा अ० वली अहद होने के बावजूद हुकूमत के सियासी मक़सद के साथ नहीं चल सके तो आपको भी शहीद कर दिया गया।

अब मामून के ख़्याल में ये मौक़ा बहुत क़ीमती था कि इमाम रज़ा अ० का जानशीन आठ नौ साल का एक बच्चा है जो तीन चार साल पहले ही बाप से बिछड़ गया था। हुकूमत की सियासी सूझबूझ कह रही थी कि इस बच्चे को अपने तरीक़े पर लाना बहुत आसान है और इसके बाद इमामत का वह सेंटर हमेशा के लिए ख़त्म हो जाएगा जो हुकूमत के ख़िलाफ़ ख़ामोश मगर इन्तेहाई ख़तरनाक है।

मामून इमाम रज़ा अ० की वली अहदी की मुहिम में अपनी नाकामी को मायूसी नहीं मानता था क्योंकि इमाम रज़ा अ० की ज़िन्दगी एक उसूल पर चल रही थी। उसमें बदलाव नहीं हुआ तो ये ज़रूरी नहीं कि अगर इमाम मुहम्मद तक़ी अ० आठ साल की उम्र में शहंशाही ख़ानदान का हिस्सा बना लिए जाएं तो वह भी बिल्कुल अपने बुज़ुर्गों के उसूल पर ही बाक़ी रहेंगे।

ज़ाहिर है कि जो लोग ख़ानदाने आले मुहम्मद को क़रीब से जानते थे उनके अलावा उस वक़्त का हर शख़्स यक़ीनन वही सोच रहा होगा जो मामून सोच रहा था मगर हज़रत इमाम मुहम्मद तक़ी अ० ने अपने किरदार से साबित कर दिया कि जो हस्तियाँ आम लोगों से ऊपर होती हैं वह हमेशा इन्सानियत के सब से बड़े मुक़ाम पर होती हैं। ज़ाहिर है कि आप भी उसी क़ुदरती सांचे में ढले हुए थे। आपने शादी के बाद शाही महल में रहने से इन्कार कर दिया। बग़दाद में जब तक रहे, आप एक अलग मकान किराए पर लेकर रहे और शाही महल को हमेशा-हमेशा के लिए छोड़ दिया।

एक साल के बाद ही मामून से कह कर उम्मुल फ़ज़्ल के साथ मदीने तशरीफ़ ले आए। उसके बाद आख़िर तक अपने ही घर में रहे। जहां ड्योढ़ी का वही अन्दाज़ रहा जो उस से पहले था, न पहरेदार और न कोई ख़ास रोक-टोक, न कोई शानो-शोकत न हटो-बचो की आवाज़ें, न मुलाक़ात की कोई हदबन्दी, न मुलाक़ातियों के साथ बर्ताव में कोई फ़र्क़। आप ज़्यादा तर मस्जिदे नबवी में बैठते थे जहाँ मुसलमान आपके वाज़ और नसीहतें सुनते थे, हदीस लिखने वाले हदीसें पूछते रहते थे, इल्म के प्यासे इल्मी मसले पूछते और अपनी इल्मी मुश्किलों को हल करते रहते थे। शाही सियासत की हार का नतीजा ये था कि आख़िर आपको भी उसी तरह शहीद कर दिया गया जिस तरह आपके बुज़ुर्गों को इससे पहले किया जाता रहा था।

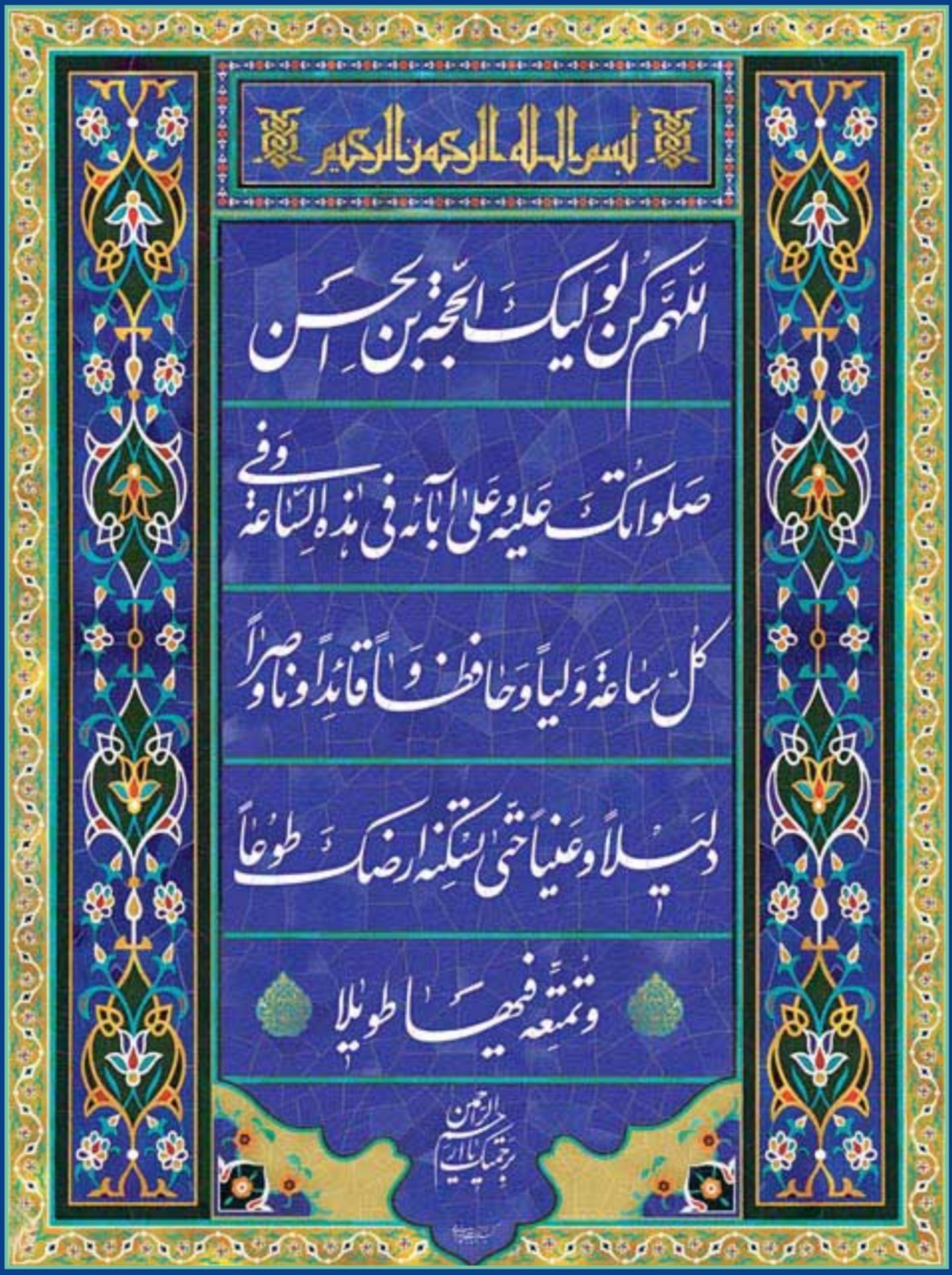

بسم الله الرحمن الرحيم

اللّهمّ كن لوليّك الحجّة بن الحسن

صلواتك عليه وعلى آبائه في هذه السّاعة وفي

كلّ ساعة وليّاً وحافظاً وقائداً وناصراً

ودليلاً وعيناً حتّى تسكنه أرضك طوعاً

وتمتّعه فيها طويلا

برحمتك يا ارحم الراحمين

السلام علیک یا علی بن موسی الرضا

Special Thanks to

GULSHAN

MEHANDI & HERBALS

IRFAN ALI PRADHAN
403 & 404, A Block,
REGALIA HEIGHTS, Ahmadabad Palace Road,
KOHE-FIZA, BHOPAL (M.P.) 462001, INDIA.
+919893030792, +917554220261

MOHTARMA "GULSHAN"
44, Ganesh Niwas, Shamla Hills Road
Near AAKASHWANI
BHOPAL (MP)
0755-4224261